आरक्षण : विभेदमूलक न्याय
समस्या या समाधान

सुशील कुमार मोदी

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्
बिहार

आरक्षण : विभेदमूलक न्याय
समस्या या समाधान

प्रकाशक :
अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्
नयाटोला, पटना-८००००४

(c) : प्रकाशक

प्रथम संस्करण : २००० प्रति

मूल्य : दो रुपया मात्र

मुद्रक :
आर० के० प्रिन्टर्स
गोविन्द नगर, मथुरा-२८१००१

लेखक परिचय .
सुशील कुमार मोदी

* पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ के भूत-पूर्व महासचिव
* एम. एस. सी. (बनस्पति) की पढ़ाई बीच में छोड़कर जे० पी० आन्दोलन में सम्मिलित
* जे० पी० आन्दोलन, १९७४, के प्रमुख छात्र नेता
* सम्प्रति अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् के राष्ट्रीय महामंत्री

लेखक की ओर से.....

पिछले कुछ वर्षों में दलितों की समस्या के साथ धर्मान्तरण, आरक्षण, भूमि-विवाद, न्यूनतम मजदूरी, शोषण, अत्याचार जैसे नये शब्द जुड़ गये है। दलित समस्या के धार्मिक आयाम से अधिक महत्वपूर्ण राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक आयाम हो गये हैं।

आज देश का दलित मन्दिर प्रवेश, अस्पृश्यता, पानी भरने के अधिकार के लिए संघर्ष के वजाय शिक्षा, सत्ता सम्पत्ति में अपने अधिकारों की लड़ाई द्वारा अपनी मुक्ति का प्रयास कर रहा है।

अनेक संगठन दलितोद्धार के नाम पर 'वर्ग चेतना' 'वर्ग संघर्ष" द्वारा समाज में हिंसा, प्रतिशोध, तनाव उत्पन्न कर रहे है। कहीं दलितों के इस्लाम या इसाई मत में धर्मान्तर में दलित-समस्या का समाधान खोजा जा रहा है। कहीं पिछड़ों को मिले थोड़े बहुत अधिकारों से झुझला कर समाज का सवर्ण 'प्रतिभा' 'समानता' की आड़ में उन अधिकारों को छीनने का प्रयास करता दिखता है। फलतः जातीय संघर्ष, खुली भिड़न्त, घृणा-द्वेष का वातावरण उत्पन्न होता दिख रहा है।

समसामयिक जगत की प्रचलित मान्यताओं तथा धारणाओं यथा मार्क्सवाद, उदारवाद; माओवाद, पूँजीवाद से इस समस्या के हल का कोई भी प्रयास अधूरा रहेगा। सवर्ण मानसिकता के प्रयास इस समस्या को और अधिक जटिल बना रहे हैं। भारतीय सन्दर्भ और भारतीय तरीके से ही इसका समाधान खोजना होगा।

इस पृष्ठभूमि में ही आरक्षण विवाद का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। असहमति के मुद्दे अनेक हो सकते हैं। परन्तु, परिवेशगत संस्कारों से अलग हटकर विचार किया तो सहमति हो सकती है।

पटना

विजयदशमी, 23 अक्टूबर, 1985

सुशील कुमार मोदी

❀ अनुक्रमणिका ❀

		पृष्ठ
1.	आरक्षण का औचित्य	1—8
2.	विधान मण्डल, शिक्षा तथा सेवा में आरक्षण	8—11
3.	काका कालेलकर आयोग	11—12
4.	मण्डल आयोग	12—14
5.	विभिन्न राज्यों में पिछड़ा वर्ग	14—16
6.	आरक्षण से जुड़े कुछ प्रश्न	16—28
7.	प्रस्ताव	28—31
8.	कुछ आँकड़े	32—33
9.	सार संक्षेप	33—34
10.	दस्तावेज	तीसरा कवर पेज

आरक्षण का औचित्य

भारतीय संविधान लागू होने के पहले से इस देश के विधान मण्डलों तथा अनेक राज्यों में शिक्षा तथा सेवा में आरक्षण का प्रावधान था। इन विशेष प्रावधानों का कभी किसी ने मुखर विरोध नहीं किया। फिर अचानक 1978 के पश्चात् आरक्षण इतना विवादास्पद कैसे बन गया? कारण, हमारे राजनीतिज्ञ हैं, जिन्होंने आरक्षण को हमेशा अपनी राजनीति का हथियार बनाया। गुजरात और मध्य प्रदेश इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। चुनाव के मौके पर गुजरात में 18% तथा मध्य प्रदेश में 29% के अतिरिक्त आरक्षण की घोषणा कर दी गयी। चुनाव में पिछड़े वर्गों का भरपूर वोट इकट्ठा किया गया। लाभ मिल जाने पर चुनाव के पश्चात् बढ़ाये गये आरक्षण को स्थगित भी कर दिया गया। चुनाव के समय इस गलत निर्णय पर चुप्पी साधने वाला विपक्ष भी चुनाव के बाद मुखर हो गया।

गलत मंशा से किया गया कोई फैसला न तो सामाजिक न्याय दिला सकता है और न ही राजनीतिक जागृति पैदा कर सकता है। ऐसे फैसले आपसी मनमुटाव और जाति संघर्ष ही बढ़ाते हैं। गुजरात, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार में यही हुआ। लेकिन किसी सोलंकी, अर्जुन सिंह, कर्पूरी ठाकुर की गलतियों ये हम यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते कि आरक्षण स्वयं ही गलत नीति है।

गुजरात के आन्दोलनकारी नवीन आरक्षण का विरोध करते-करते सम्पूर्ण आरक्षण को ही समाप्त करने की माँग करने लगे। देश के सवर्ण समुदाय का एक बड़ा वर्ग आरक्षण के औचित्य पर प्रश्न चिन्ह लगा रहा है? क्या यह आरक्षण अनन्त काल तक चलने वाला है? 'प्रतिभा', 'योग्यता' की कीमत पर अयोग्य लोगों को बढ़ावा क्या उचित है? जातिवाद को बढ़ावा मिलेगा? अगर करना है तो आर्थिक आधार क्यों नहीं? गरीब क्या सवर्णों में नहीं हैं? आदि-आदि प्रश्न उठाये जा रहे हैं।

पिछड़े वर्गों के नेता भी अपने सहजातियों को स्वयं की योग्यता एवं परिश्रम से आगे बढ़ने की प्रेरणा देने के बजाय ऊँची जातियों के विरुद्ध विष वमन कर घृणा एवं द्वेष उत्पन्न कर रहे हैं। 'अब तक ऊँची जातियों ने हमें पैरों तले रौंदा है, अब हम उसका बदला लेंगे।' अनेक स्थानों पर साम्यवादी गुटों ने इसे वर्ग संघर्ष का हिंसात्मक रूप प्रदान कर दिया है। परिणामतः आरक्षण के मुद्दे पर समाज दो वर्गों में विभक्त हो गया है। सामाजिक एकरसता के उद्देश्य से उत्पन्न 'आरक्षण' सामाजिक विघटन का कारण बन रहा है?

विकृत जाति व्यवस्था

आरक्षण के औचित्य पर बहस से पहले इस देश की जन्मना जाति व्यवस्था से उत्पन्न ऊँच-नीच पर आधारित सामाजिक व्यवस्था पर विचार करना होगा। कर्मो की उत्तम वर्ण व्यवस्था कालक्रम में जाति व्यवस्था में रूपान्तरित हो गयी। हिन्दू समाज 5 हजार से अधिक छोटी-छोटी जातियों के घरौंदे में विभक्त हो गया। जाति विशेष में उत्पन्न व्यक्ति के लिये पूर्व से ही कर्म एवं प्रतिष्ठा निर्धारित हो गयी। अन्तर्जातीय विवाह. खान-पान, रोटी-बेटी के सम्बन्ध प्रतिबन्धित हो गये। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य जिन्हें द्विज या सवर्ण भी कहते हैं, सउत्पन्न जातियों ने शिक्षा, सम्पत्ति, शासन, सम्मान पर एकाधिकार कर लिया।

शिक्षा, सम्पत्ति. शासन, सम्मान से वंचित जातियाँ समाज में असम्मानित, निकृष्ट पेशों द्वारा जीविकोपार्जन करती हुई, गाँव के अन्तिम छोर पर अस्पृश्य की जिन्दगी जीने के लिये बाध्य कर दी गयी। हरिजनों के लिये मन्दिर के दरवाजे, साथ बैठकर भोजन करने, कुँए पर पानी भरने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। अन्य अवर्ण जातियों को भी पढ़ने का अधिकार नहीं था। कानून के सामने सभी बराबर नहीं थे। भिन्न-भिन्न जातियों के लिये अलग-अलग विधान थे। स्मृति, धर्म ग्रन्थों के माध्यम से इन विशेषाधिकारों अस्पृश्यता, दोहरी न्याय व्यवस्था को वैधानिकता का जामा पहना दिया गया। पूर्व जन्म के पाप का फल समझकर, हीन भाव से ग्रसित देश की बहुसंख्य आबादी ने इस निकृष्ट जीवन को चुपचाप स्वीकार कर लिया।

अनेक संत, महात्माओं, कवियों, दार्शनिकों, समाज सुधारकों ने इस व्यवस्था के विरूद्ध समाज को जाग्रत किया। परन्तु गुलामी के विरूद्ध संघर्षरत समाज इन सुधारों की ओर अपेक्षित ध्यान नहीं दे सका। बाल विवाह, सती-प्रथा, पर्दा-प्रथा, अस्पृश्यता विदेश गमन की निषिद्धता आदि विकृतियाँ गुलामी के कालखण्ड की देन है। विदेशी आक्रमण से बचाव हेतु उत्पन्न इन प्रथाओं ने तत्काल त्राण अवश्य दिलाया, परन्तु यही समाज की बेड़ियाँ भी बन गयी।

निष्कर्षतः इस जाति व्यवस्था ने समाज में गहरी खाई उत्पन्न कर दी। एक ब्राह्मण जूते का व्यापार करने पर भी सम्मानित होता है। दूसरी ओर एक शूद्र अध्यापक, शासक बनने पर भी सम्मान योग्य नहीं। सवर्ण जाति में उत्पन्न व्यक्ति गुणहीन होने पर भी श्रेष्ठ हो जाता है और गुणवान व्यक्ति अन्य जाति में उत्पन्न होने के कारण निम्न हो जाता है। अनुसूचित जाति का व्यक्ति कितना ही धनी क्यों न हो, समाज में ऊँची जातियों के आगे उसे हेय दृष्टि से देखा जाता है। कथित ऊँची जातियों को सम्मान देना उसका कर्तव्य माना जाता है।

जाति व्यवस्था से उत्पन्न गरीबी

जाति व्यवस्था की इन्हीं असंगतियों का परिणाम है कि आज देश के 100 गरीबों में 95 गरीब हरिजन, आदिवासी, पिछड़ी जातियों में से हैं। यदि अशिक्षित, निरक्षर लोगों का सर्वेक्षण किया जाय तो 95 फीसदी, इन्हीं वर्गों के लोग पाये जायेंगे। खेतिहर एवं औद्योगिक मजदूर, भिखारी, रिक्शा चालक, सफाई कर्मचारी, चपरासी, चतुर्थ वर्गीय कर्मचारी, कुली, श्रमिक, खेत में काम करने वाली महिलाएँ याने ऐसे पेशे जिनको समाज में प्रतिष्ठा नहीं है, में काम करने वाले शत-प्रतिशत इन्हीं वर्गों के लोग मिलेंगे। इन कामों को करता हुआ शायद ही कोई सवर्ण मिले। वहीं चिकित्सक, शिक्षक, व्यापार, इन्जिनियरी, आदि सम्मानप्रद पेशों में केवल तथाकथित सवर्ण जाति के लोग दिखलाई पड़ेंगे। तात्पर्य यह कि यद्यपि गरीबी, बेकारी, भुखमरी, ऊँची जाति के लोगों में भी है परन्तु निर्धनों में निर्धनतम, अशिक्षितों से सबसे अधिक अशिक्षित पिछड़े वर्ग के लोग ही मिलेंगे और यदि गूजर, गड़रिया, कोइरी, काछी, लुहार, कुम्हार, नाई, तेली, बढ़ई, कहार आदि सैकड़ों जातियाँ जो हाथ के श्रम पर आश्रित हैं, ने यदि धन अर्जित कर भी लिया तो उसे सामाजिक सम्मान प्राप्त नहीं है। वहीं एक ऊँची जाति का व्यक्ति गरीब होने पर भी सम्मान का पात्र है। अतः गरीब दोनों हैं परन्तु दोनों की गरीबी में अन्तर है। एक की गरीबी रोजगार के अभाव के कारण है तो दूसरे की गरीबी जाति व्यवस्था की निम्नतर सीढ़ी पर उत्पन्न होने के कारण है।

विकासः सामान्य व्यक्ति का स्तर

आरक्षण की भूमिका यहीं पर उत्पन्न होती है। किसी भी देश की समृद्धि, विकास इस बात पर निर्भर करता है कि उस देश के सामान्य व्यक्ति का जीवन स्तर कैसा है? सामान्य व्यक्ति के आर्थिक, शैक्षणिक सामाजिक उन्नति पर ही देश की प्रगति निर्भर है। किसी देश के कुछ लोगों द्वारा केवल धन, ऐश्वर्य, यश, शिक्षा, प्राप्त करने से नहीं कह सकते कि देश प्रगति कर रहा है। 'A Nation is as great as its common man' की उक्ति यदि सत्य है तो 15·5% हरिजन, 52% पिछड़ा वर्ग अर्थात् 75% ऐसे लोगों के रहते जो शिक्षा, शासन, सम्पत्ति, सम्मान के अधिकार से वंचित हैं, के रहते यह देश 21वीं शताब्दी की चुनौतियों को किस प्रकार स्वीकार कर सकेगा? दुनिया में है कोई ऐसा देश जिसने 75% पिछड़े लोगों के रहते विकास किया हो? गाँधी के अन्तिम व्यक्ति के विकास के बिना समाज का विकास कभी नहीं हो सकता।

समान अवसर बनाम विशेष अवसर

समाज के सम्यक् विकास के लिये सदियों से उपेक्षित समूहों को शिक्षा, सम्पत्ति, शासन, प्रशासन में अधिकार दिलाना हर समाज का कर्तव्य होना चाहिये। परन्तु यदि इन्हें सदियों से विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के साथ स्पर्धा में खड़ा कर दिया जाय तो ये कभी सत्ता, शिक्षा, सेवा के गलियारे तक नहीं पहुंच पायेंगे।

'समान अवसर' के सिद्धान्त की दुहाई देकर यदि किसी पिछड़ी जाति के व्यक्ति को किसी ऊँची जाति के व्यक्ति के साथ मेडीकल, इन्जिनियरिंग, सेवा या चुनाव में खुली स्पर्धा में खड़ा कर दिया जाय तो यह निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता कि पिछड़ी जाति का व्यक्ति प्रवेश पा सकेगा। तो फिर क्या उन्हें इन पेशों में जाने से वंचित कर दिया जाय ? नहीं, कदापि नहीं ! 'समान अवसर' का सिद्धान्त वहीं लागू होता है जहाँ सभी समान हो। असमान लोगों की स्पर्धा सदैव असमानता को ही जन्म देती है। एक लाइट वेट पहलवान को किसी हेवी वेट से स्पर्धा कराना कहाँ तक उचित होगा ? जब समाज में असमानता है तो समानता का तत्व लागू करना न केवल अनुचित है बल्कि अन्यायपूर्ण है। हट्टे-कट्टे व्यक्ति के साथ कमजोर भी दौड़े, यदि यह आवश्यक है तो कमजोर को संरक्षण देना आवश्यक होगा। हम कहेंगे यह जो स्वस्थ व्यक्ति है वह एक मील दौड़ेगा तुम सिर्फ एक फर्लांग दौड़ो। इसे ही विभेदकारक संरक्षण (Protective Discrimination) कहते हैं। यानि यह संरक्षण विभेदमूलक है, परन्तु सामाजिक न्याय एवं मानवीय दृष्टि से आवश्यक है।

यदि पिछड़े लोगों की शिक्षा, सेवा, शासन में हिस्सेदारी देश के विकास के लिये आवश्यक है और ये खुली स्पर्धा द्वारा वहाँ तक नहीं पहुंच सकते, तो विशेष संरक्षण द्वारा इन्हें यह हिस्सेदारी देने की व्यवस्था करनी होगी। 'समान अवसर', प्रतिभा, विभेद के नाम पर उनको वंचित करना देश के लिये घातक होगा। वही समाज मानवीय समझा जाता है जो अपने कमजोर, दुर्बल, अपाहिज' बूढ़े लोगों को संरक्षण देता है। क्या घर में छोटे भाई के बीमार पड़ने पर उसके लिये विशेष व्यवस्था नहीं की जाती ? बसों, सिनेमा हाल, पार्क आदि में महिलाओं बच्चों, वृद्धों के लिये स्थान सुरक्षित नहीं रखा जाता ? यह संरक्षण कृत्रिम विषमता को अवश्य जन्म देता है लेकिन हेतुतः यह दुर्बल बाँधवों के लिये सुरक्षा का प्रबन्ध है।

आरक्षण : परिणाम की समानता

एच० जी० गेन्स के अनुसार समानता मूलतः तीन प्रकार की होती हैं।

1. अवसर की समानता 2. व्यवहार की समानता तथा 3. परिणाम की समानता। इन तीनों में परिणाम की समानता ही एकमात्र समतावादी सिद्धान्त है। यदि अवसर एवं व्यवहार की समानता से विषमता उत्पन्न होती है तो इस समानता का कोई अर्थ नहीं है। परन्तु लक्ष्य यदि सामाजिक समता उत्पन्न करना है. तो उसके लिये असमान अवसर या असमान व्यवहार भी करना पड़े तो यह केवल उचित नहीं बल्कि न्यायपूर्ण होगा।

अतः परिणाम की समानता हेतु यानि सत्ता, सेवा, शिक्षा में इन उपेक्षित बन्धुओं को समान हिस्सेदारी देने के लिये 'विशेष अवसर' (Preferential treatment) देना होगा। इसी 'विशेष अवसर' सिद्धान्त का व्यवहारिक रूप आरक्षण है। इसे **विभेदमूलक क्षतिपूर्ति** Compansatory Discriminaton भी कहते हैं। अर्थात् सदियों से पिछड़े लोगों के साथ जो अन्याय हुआ है, जिसके कारण वे सामाजिक विकास प्रक्रिया में अत्यन्त पिछड़ गये हैं, उस क्षति की पूर्ति करने के लिये यदि शेष समाज के साथ विभेदमूलक व्यवहार भी किया जाय तो यह अनुचित नहीं। गांधीजी कहा करते थे 'आज हरिजनों' के लिये सवर्ण हिन्दू जो कुछ भी करता है वह पीढ़ी दर पीढ़ी उनके प्रति किये गये अपराधों का अश्रूपूर्ण प्रायश्चित के अलावा कुछ भी नहीं होगा।' पं. दीनदयाल उपाध्याय कहते थे' रस्सी की मजबूती उसके कच्चे धागों पर निर्भर करती है।' यदि कच्चे धागे पर ध्यान नहीं दिया गया तो रस्सी के टूटने का डर रहता है। क्या समाज के इन कमजोर वर्गों के और टूटने के पहले उन्हें संरक्षण देना आवश्यक नहीं, ताकि वे भी शिक्षा, सेवा, सत्ता में हिस्सेदार बनकर देश के विकास में योगदान कर सकें।

अघोषित आरक्षण

अभी तक तो सेवा, शिक्षा, शासन में 18% सवर्ण जातियों का ही अघोषित आरक्षण था। अन्यथा क्या कारण है कि आजादी के 37 वर्षों बाद भी प्रथम श्रेणी की सेवाओं में इन दोनों (SC और ST) का प्रतिनिधित्व 5·68 फीसदी है जबकि इनके लिये आरक्षण 22·5 फीसदी है। इसका अर्थ है कि हमारी सामाजिक व्यवस्था में कुछ दोष अवश्य है? अन्यथा आबादी का 75% हिस्सा पीछे क्यों रह गया? समाज के जिस वर्ग को पढ़ने का, आगे आने का जितना मौका मिलेगा, वह उतना ही आगे जायेगा। सवर्ण जातियों का आज यदि वर्चस्व है तो उसका कारण केवल उनकी जन्मजात योग्यता नहीं हैं? भारत की द्विज जातियों को सैकड़ों सालों से यह मौका मिलता आया है, जिससे उनमें योग्यता, पात्रता उत्पन्न हो गयी। बेचारे दलितों,

आदिवासियों, पिछड़ों को भी यदि सैकड़ों वर्षों से मौका मिला होता तो वे कभी किसी से पीछे नहीं रहते ?

आरक्षण : सामाजिक न्याय का तकाजा

अब यदि कुछ हिस्सा अपने पद-दलित, उपेक्षित बान्धवों को देना ही पड़े तो इसे सहर्ष स्वीकार करना चाहिये। आज तक जिन्होंने कभी शिक्षा नहीं पायी, शासन नहीं किया, प्रशासन में हिस्सेदारी नहीं की, यदि वे आरक्षण की बदौलत डाक्टर, इन्जीनियर वकील, प्रशासक, शासक, विधायक, मंत्री बनते दिख पड़ रहे हैं, तो इससे ईर्ष्या क्यों ? द्वेष क्यों ? यह तो विकास का शुभ संकेत है कि समाज आगे बढ़ रहा है। बस में काफी पहले आने के बाद भी किसी महिला के आने पर उठना पड़ जाता है, उस समय ईर्ष्या क्यों नहीं होती ? घर में बीमार भाई को अधिक दूध, फल प्राप्त होते देख गुस्सा क्यों नहीं आता ? इसके विपरीत यदि कोई अपंग दौड़ने लगे, बीमार भाई स्वस्थ हो जाये तो प्रसन्नता होती है। उसी प्रकार अपने पिछड़े बान्धवों को उच्च पदों पर आते देख खुशी क्यों नहीं होती ? आँखों में हर्ष के आँसू क्यों नहीं बहते ? मन में यह विचार क्यों नहीं आता कि सदियों से उपेक्षित बन्धु अब आगे बढ़ रहे हैं। किसी देशभक्त के लिये इससे अधिक प्रसन्नता की बात और क्या हो सकती है ?

कहीं पिछड़ों को मिले थोड़े बहुत अधिकारों से झुँझला कर समाज का सवर्ण समुदाय 'प्रतिभा' 'समान अवसर' 'योग्यता' की आड़ में इन अधिकारों को छीनने का प्रयास तो नहीं कर रहा है ? कहीं आरक्षण विरोध के पीछे दलितों को हेय निगाह से देखने वाली वह सवर्णी मानसिकता तो नहीं है जिसने आज तक दलितों के उत्थान के प्रत्येक प्रयास का विरोध ही किया है।

दलितों में उत्पन्न अधिकार की उत्कट आकांक्षा की गति को कुंठित करना, अवरोध उत्पन्न करना आत्मघाती होगा। अपने हितों, अधिकारों की कटौती होती है तो भी समाज के व्यापक हित में इसे स्वीकार करना चाहिये। आइये। दलितों को उनके अधिकार, सामाजिक न्याय, आर्थिक समता दिलाने हेतु समाज की मानसिकता को बदलेंगे तथा आवश्यकता पड़ने पर समाज के निहित स्वार्थ, रूढ़िवाद के विरूद्ध शान्तिपूर्ण संघर्ष भी करेंगे।

विधानमण्डल, शिक्षा तथा सेवा में आरक्षण

विधानमण्डलों में आरक्षण

विधानमण्डलों, सरकारी सेवाओं तथा शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का

इतिहास पुराना है। मार्ले-मिन्टो सुधारों के अन्तर्गत 1909 में सर्वप्रथम मुसलमानों व यूरोपियनों को पृथक निर्वाचन का अधिकार प्रदान किया गया। अगस्त 17, 1932 को गाँधीजी के विरोध के बावजूद अंग्रेज प्रधानमंत्री मेकडोनाल्ड ने 'कम्यूनल अवार्ड' घोषित किया। इस घोषणा में अछूतों को काफी राजनीतिक अधिकार मिले थे। इसी में अछूतों के लिये अलग 'इलेक्टोरेट' पृथक निर्वाचन की बात कहीं गयी थी। अन्य कुछ बातें थी—'सुरक्षित क्षेत्रों में अछूतों का प्रतिनिधि केवल अछूतों के वोटों से ही चुना जायेगा तथा सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में भी अछूतों को वोट देने का अधिकार होगा, जिससे उनका अधिकार सवर्णों पर भी रहे। गाँधीजी हिन्दू समाज को सवर्ण और अछूत में बाँटने के खिलाफ थे।

पुणे समझौता

गाँधीजी उन दिनों यरवदा जेल, पूना में बंद थे। जेल से उन्होंने प्रधानमंत्री मेकडोनाल्ड को पत्र लिखा 'यदि अछूतों को हिंदुओं से पृथक किया गया, तो वे अपने जीवन की बाजी लगा देंगे।' ब्रिटिश हुकूमत के अस्वीकार किये जाने पर गाँधीजी ने इस अवार्ड के खिलाफ आमरण अनशन की घोषणा कर दी। पूरे देश में खलबली मच गयी। 23 सितम्बर को डा. अम्बेडकर गाँधीजी से मिलने जेल गये। गाँधीजी का तर्क था कि आगामी दस वर्षों में छुआछूत मिट जायेगी। समानता आ जायेगी। डा. अम्बेडकर कहते थे कि जो हिन्दू दिमाग है, उसमें छूआकूत 25 वर्षों में भी खत्म नहीं होगी और न ही अछूत समान स्तर पर आयेंगे। गांधीजी की ओर से डा. अम्बेडकर को यह आश्वासन देने के पश्चात् कि हिन्दू धर्म को स्वयं को सुधारने का अन्तिम अवसर दिया जाये। डा. अम्बेडकर समझौते पर राजी हो गये। 24 सितम्बर. 1932 को सायं 5 बजे पूना जेल में प्रसिद्ध 'पूना पैक्ट' हुआ। अछूतों की ओर से पं मदन मोहन मालवीय ने हस्ताक्षर किये। इस समझौते पर जयकर, सप्रू, घनश्याम दास बिड़ला, राजाजी. डा. राजेन्द्र प्रसाद श्रीनिवासन, सी. एम. राजा, देवदास गाँधी, ठक्कर बापा आदि ने भी हस्ताक्षर किये।

सुरक्षित निर्वाचन क्षेत्र

इस समझोते के तहत दलितों को पृथक निर्वाचन के स्थान पर 'संयुक्त मतदान परन्तु सीट सुरक्षित' की व्यवस्था थी यानि उस सीट हेतु उम्मीदवार बनने का अधिकार केवल दलित का होगा, परन्तु सारा हिन्दू समाज संयुक्त रूप से मतदान करेगा। यही से दलितों के लिये सुरक्षित निर्वाचन क्षेत्र की पद्धति प्रारम्भ हुई।

गाँधीजी जानते थे कि यदि दलितों के लिये सुरक्षित सीट की व्यवस्था नहीं

की गयी तो अस्पृश्यता से जर्जर हिन्दू समाज में एक भी दलित विधानमण्डल तक नहीं पहुंच पायेगा। दलितों का विधानमण्डल में जाना आवश्यक है, परन्तु वह इस आधार पर नहीं कि दलित दलित को वोट देकर सदैव के लिये हिन्दू समाज से स्वयं को पृथक कर ले बल्कि दलित खड़ा होगा और सम्पूर्ण हिन्दू समाज उसके लिए मतदान करेगा। इस समझौते के फलस्वरूप दलितों को प्रान्तीय विधानसभाओं में पृथक निर्वाचन से प्राप्त 71 सीट के बजाय 151 सीट तथा केन्द्रीय असेम्बली में कुल सीट का 18% प्राप्त हुई।

गुजराती संत नरसिंह मेहता ने अपने भजनों में 'हरिजन' शब्द प्रयोग किया है। वहीं से गाँधीजी ने इसे लेकर सर्वप्रथम 'दलितों' के लिये प्रयुक्त किया। पुणे समझौते के बाद गाँधीजी ने 21 दिन का उपवास आत्म शुद्धि तथा अछूतोद्धार हेतु किया। साबरमती आश्रम हरिजन उत्थान के लिए समर्पित कर दिया। 1933 फरवरी में गाँधीजी ने 'हरिजन' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया।

नवम्बर 1933 से जुलाई 1934 तक, 12,500 मील की यात्रा गाँधीजी ने केवल हरिजनोद्धार हेतु की और इस कार्य हेतु 8 लाख रुपये इकट्ठे किये।

दलितों के लिये 'अनुसूचित जातियाँ' शब्द प्रयोग पहली बार भारत शासन अधिनियम 1935 में आया जिसमें पुणे समझौते के तहत विधानमण्डलों में सुरक्षित सीट की व्यवस्था थी। भारतीय संविधान लागू होने पर अनुच्छेद 330, 332 तथा 334 के तहत लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में 10 वर्ष की कालावधि की समाप्ति तक 'अनुसूचित जाति' तथा 'जन जाति' हेतु आरक्षण की व्यवस्था की गयी।

इसलिये दलितों और पिछड़ों को जो आरक्षण आज मिलता है, वह हमारा संवैधानिक दायित्व है। अगर अंग्रेजों की कूटनीति सफल हो गयी होती, तो 1947 में सिर्फ दो देश हिन्दुस्तान और पाकिस्तान नहीं बनते बल्कि एक तीसरा देश और बनता, जिसका शासक कोई दलित या पिछड़ा होता। लेकिन अम्बेडकर जैसे समझदार निर्भीक और विद्वान तथा गाँधी सरीखे राष्ट्रवादी और दूर दृष्टि वाले नेता के कारण देश टूटने से बचा।

शिक्षा तथा सेवा में आरक्षण

20वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशक में उस समय प्रचलित अंग्रेजी शिक्षा तथा सरकारी सेवाओं में समाज के 18% सवर्ण विशेषकर मद्रास, मैसूर राज्य में ब्राह्मणों

का वर्चस्व था। समाज के सर्वाधिक जागरूक सवर्ण समुदाय ने ही ब्रिटिश शासन द्वारा प्रदत्त सुविधाओं, शिक्षा, सेवाओं का सर्वाधिक लाभ पाया। 1900 में मद्रास राज्य में ब्राह्मणों की साक्षरता 73·6% जबकि पिछड़ी जातियों में मात्र 6·9% था।

माटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार तथा द्विशासन प्रणालो से प्रेरित होकर गैर ब्राह्मण अभिजात्य वर्ग ने 1916 में जस्टिस पार्टी का गठन किया जो प्रारम्भ से ही मद्रास राज्य में ब्राह्मण प्रभुत्व के विरुद्ध आवाज उठाता रहा। 1920 में जस्टिस पार्टी के शासन में आने के बाद 1921 में सरकारी सेवाओं में गैर ब्राह्मणों की नियुक्ति के सम्बन्ध में विशेष व्यवस्था की गयी। 1927 में सरकारी आदेश से मद्रास राज्य के मेडिकल, इन्जिनियरिंग तथा अन्य सेवाओंहे तु पूरे समाज को 5 हिस्सों में बाँटा गया और प्रत्येक हिस्से की जातियों को अपने हिस्से की सीट हेतु ही प्रयास करना था। यह व्यवस्था 1947 तक चलती रही।

इसी प्रकार मैसूर राज्य में 1921 में मिल्लर कमिटी तथा बम्बई में 1928 में ओ० एच० बी० स्टार्ट की अध्यक्षता में गठित समिति की अनुशंसा पर शिक्षा तथा नौकरियों में पिछड़े वर्गों को विशेष सुविधा देने हेतु व्यवस्था की गयी।

इस प्रकार मद्रास, मैसूर, बम्बई, त्रावणकोर-कोचीन जैसे दक्षिणी राज्यों में पिछड़ी जातियों के आन्दोलन के परिणामस्वरूप 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही शिक्षा तथा सेवाओं में विशेष व्यवस्था की शुरूआत हुई जिसके परिणामस्वरूप सवर्ण जातियों का वर्चस्व कम किया जा सका। दुर्भाग्य से उत्तर भारत के राज्यों में ऐसा कोई आन्दोलन या सुधार का प्रयास नहीं हुआ।

आरक्षण की संवैधानिकता

भारतीय संविधान निर्माताओं ने अनेक अनुच्छेदों द्वारा समाज के सामाजिक तथा शैक्षणिक पिछड़े वर्गों को शिक्षण संस्थाओं तथा सरकारी सेवाओं में संरक्षण प्रदान करने के लिए अनेक प्रावधान किये हैं :—

नौकरियों में आरक्षण

सम्बन्धी प्रावधान अनुच्छेद 16(4), 320 (4) तथा 335 में किया गया है। इनके अनुसार

(क) प्रशासन की कार्यपटुता का ध्यान रखते हुए।

(ख) पिछड़े वर्ग के नागरिकों हेतु।

(ग) यदि इनका राज्याधीन सेवाओ में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है।

तो सेवाओं का आरक्षण किया जा सकता है। इन अनुच्छेदों में आरक्षण की कोई कालावधि तथा प्रतिशत का उल्लेख नहीं है।

शिक्षा में आरक्षण

मद्रास राज्य के सरकारी आदेश जिसके तहत तकनीकी संस्थाओं में आरक्षण किया गया था, के विरुद्ध दो ब्राह्मण उम्मीदवारों ने सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दाखिल की कि इस निर्णय से संविधान के अनुच्छेद 29(2) के अधीन मौलिक अधिकारों का हनन होता है जिसमें धर्म, वंश, जाति, भाषा के आधार पर सरकार द्वारा संचालित या उससे सहायता प्राप्त किसी शैक्षणिक संस्थान में किसी नागरिक को प्रवेश से वंचित नहीं किया जा सकता। 'चम्पकम दोराइराजन' के इस सुप्रसिद्ध मुकदमे में न्यायालय ने सरकारी आरक्षण व्यवस्था को असंवैधानिक करार कर दिया।

इस निर्णय से देशभर में खलबली मच गयी। अनेक राजनीतिक आन्दोलन खड़े हो गये। परिणामस्वरूप भारतीय संविधान के प्रथम संशोधन बिल, 1951 के द्वारा अनुच्छेद 15 में एक और खण्ड (4) जोड़ा गया।

अनुच्छेद 15(4)—राज्य सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग की उन्नति के लिये अथवा अनुसूचित जाति और जन जातियों के लिए विशेष उपबन्ध कर सकता है। यह करने में संविधान का अनुच्छेद 15 या 29(2) किसी भी प्रकार बाधक नहीं है।'

संविधान के इन्हीं दोनों अनुच्छेदों 15(4), 16(4) के आधार पर सरकार के अधीनस्थ सेवाओं तथा शैक्षणिक संस्थाओं में आरक्षण की व्यवस्था को संवैधानिक मान्यता प्रदान की गयी।

आरक्षण : पिछड़ा वर्ग आयोग

संविधान के अनुच्छेद 340 के तहत राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह सामाजिक तथा शैक्षक्षिक दृष्टि से पिड़ड़े वर्गों की दशा का अध्ययन करने तथा उनकी स्थिति में सुधार के सुझाव हेतु आयोग का गठन करें। इस अनुच्छेद का स्पष्ट अर्थ है कि SC और ST के अलावा समाज में ऐसे वर्ग है जो सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हैं। इन वर्गों को अन्य पिछड़ा वर्ग (Other Backward Classes) OBC के नाम से पहचाना जाता है।

आरक्षण का अधिकांश विवाद तब प्रारम्भ हुआ जब यह प्रश्न उठा कि OBC

किसे कहा जाय ? उसको निर्धारित करने का मापदण्ड क्या हो ? सामाजिक तथा शैक्षणिक पिछड़ा कौन है ? आदि प्रश्न खड़े हुए तथा OBC के लिये भी आरक्षण प्रारम्भ किया गया। यहाँ यह स्पष्ट रहे कि 'अन्य पिछड़ा वर्ग' SC और ST से अलग है।

काका कालेलकर आयोग

देश का पहला पिछड़ा वर्ग आयोग 29 जन 1953 को काका कालेलकर एम० पी० की अध्यक्षता में गठित किया गया। इस आयोग ने 31 मार्च, 1955 को अपनी रिपोर्ट सरकार को सुपुर्द कर दी। केन्द्र सरकार ने 3 सितम्बर, 1956 को संसद के दोनों सदनों के पटल पर इस प्रतिवेदन को प्रस्तुत किया। परन्तु दुर्भाग्यवश संसद में इस रिपोर्ट पर कभी भी चर्चा नहीं हो सकी।

आयोग ने सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन के निर्धारण हेतु कुछ कसौटी प्रस्तुत की और उस आधार पर 2399 जातियों या समूहों की सूची तैयार की जो पिछड़ी हैं तथा उसमें 837 को अधिक पिछड़ा बताया गया।

आयोग ने पिछड़े वर्ग के योग्य छात्रों हेतु सभी तकनीकी तथा व्यवसायिक संस्थाओं में 70% आरक्षण तथा सरकारी सेवाओं के प्रथम श्रेणी में 25%; द्वितीय $33\frac{1}{3}$%; तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी में 40% आरक्षण की अनुशंसा की।

यह रिपोर्ट सर्वसम्मत नहीं थी। 11 में से 5 सदस्य इससे ससमत नहीं थे। यहाँ तक कि आयोग के अध्यक्ष काका कालेलकर ने मूल प्रतिवेदन पर हस्ताक्षर करने के बाद राष्ट्रपति को 30 पेज की चिट्ठी में रिपोर्ट की मूल मान्यताओं से ही असहमति प्रकट कर दी। उन्होंने लिखा कि रिपोर्ट जमा करने के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि पिछड़ेपन का आधार जाति नहीं होना चाहिये तथा सरकारी नौकरियों में किसी भी प्रकार का आरक्षण नहीं होना चाहिये।

केन्द्र सरकार ने यह कहते हुए आयोग की रिपोर्ट को रद्द कर दिया कि (1) पिछड़ेपन की पहचान हेतु कोई वस्तुपरक मानक (Objective Test) नहीं लगाये गये। (2) जाति पिछड़ेपन का आधार नहीं होना चाहिये।

केन्द्र सरकार ने निर्णय लिया कि (1) पिछड़े वर्गों की कोई अखिल भारतीय सूची न तैयार की जाय (2) केन्द्र सरकार की सेवाओं में SC और ST के अतिरिक्त किसी अन्य वर्ग के लिये आरक्षण न किया जाय।

अन्ततः गृह मंत्रालय ने 14 अगस्त, 1961 को सभी राज्य सरकारों को सूचित किया कि 'यद्यपि राज्य सरकारों को पिछड़ेपन की अपनी-अपनी परिभाषा निर्धारित करने की स्वतंत्रता है; परन्तु केन्द्र सरकार की निगाह में अच्छा होगा कि जाति के स्थान पर आर्थिक आधार को स्वीकार किया जाय।'

मण्डल आयोग की रिपोर्ट

संविधान के अनुच्छेद 340 के तहत ही केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार ने 1 जनवरी, 1979 को सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की स्थिति पर विचार करने हेतु बिहार के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री बिन्देश्वरी प्र० मण्डल एम० पी० (अब स्वर्गीय) की अध्यक्षता में एक आयोग गठिन किया। आयोग ने 31 दिस० 1980 को अपना प्रतिवेदन सरकार को प्रस्तुत कर दिया है।

आयोग को मुख्यतः दो बिषयों पर विचार करने को कहा गया था (1) सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के निर्धारण का आधार निश्चित करना।

(2) उपरोक्त प्रकार से निश्चित सामाजिक तथा शैक्षणिक पिछड़े वर्गों के उत्थान हेतु सुझाव देना।

मण्डल आयोग ने काका कालेलकर कमीशन की रिपोर्ट को अस्वीकार किये जाने के कारणों को ध्यान में रखकर कुछ ऐसी कसौटियाँ निर्धारित की जिसमें सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक पहलुओं की ओर ध्यान दिया गया था।

आयोग ने सरकारी तंत्र की सहायता से प्रत्येक जिले के 2 गाँव तथा एक शहरी प्रखण्ड (Urbon Block) में सर्वेक्षण कराया। इसके अतिरिक्त आयोग ने विभिन्न राज्यों के पिछड़े वर्ग की सूची देशव्यापी भ्रमण से प्राप्त व्यक्तिगत जानकारी आदि के आधार पर पूरे भारतवर्ष में कुल मिलाकर 3743 जातियों को सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप से पिछड़ा पाया।

मण्डल आयोग के अनुसार सम्पूर्ण देश में SC-15·50 तथा ST-7·51% हैं। उच्च वर्गीय हिन्दू जाति समूह 17·58% है, जिनमें ब्राह्मण 5·52% राजपूत 3·90, मराठा 2·21, जाट 1·00, बनिया 1·88, कायस्थ 1·07 तथा अन्य उच्च वर्गीय 2·00% हैं। गैर हिन्दू जातियों में मुस्लिम 11·19, इसाई 2·60, सिक्ख 1·87,

बौद्ध 0·70 तथा जैन 0·47·/. हैं। इस आधार पर गणना कर आयोग ने पाया कि भारत में पिछड़ी जातियों का प्रमाण 52·10% है जिसमें 8·40% अहिन्दु समाज की पिछड़ी जातियों का है।

चूंकि बालाजी बनाम मैसूर राज्य में आरक्षण की अधिकतम मर्यादा 50% बतायी गयी है और केन्द्रीय सेवाओं में पहले से 22·5% का आरक्षण SC और ST के लिये है। अतः पिछड़ी जातियों का प्रतिशत 52 होने के बावजूद उपरोक्त मर्यादा को ध्यान में रखकर अन्य पिछड़ी जातियों के लिये मात्र 27·/. आरक्षण का सुझाव दिया गया है।

मण्डल आयोग की अन्य सिफारिशें निम्न हैं:—

1. खुली प्रतियोगिताओं में योग्यता के आधार पर भर्ती किये गये अन्य पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को उनके 27·/. के आरक्षण कोटा के साथ समायोजित नहीं किया जाना चाहिये।

2. उपयुक्त आरक्षण को सभी स्तरों पर पदोन्नति में भी ग्राह्य बनाया जाना चाहिये।

3. न भरे गये आरक्षण कोटा को 3 साल की अवधि तक के लिये जारी रखा जाना चाहिये और उसके पश्चात् ही अनारक्षित किया जाय।

4. सीधी भर्ती हेतु अधिकतम आयु सीमा में छूट SC और ST को समान ही दी जानी चाहिये।

5. पदों के प्रत्येक वर्ग के लिये SC और ST के समान ही रोस्टर प्रणाली अपनायी जानी चाहिये।

6. आरक्षण की उपयुक्त योजना को पूर्णरुपेण राष्ट्रीयकृत बैंकों के साथ-साथ केन्द्रिय तथा राज्य सरकार के अधीनस्थ सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की सभी भर्तियों में भी लागू किया जाये।

7. सरकार से किसी न किसी रूप में वित्तीय सहायता प्राप्त कर रहे निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठान में भी उपयुक्त आधार पर भर्ती हेतु बाध्य किया जाय।

8. सभी विश्वविद्यालयों तथा सम्बन्धित कालेजों में भी उपरोक्त आरक्षण किया जाना चाहिये।

9. मण्डल आयोग ने उपरोक्त अनुशंसा के अतिरिक्त अन्य सुझाव भी दिये हैं। प्रौढ़ शिक्षा का समयबद्ध कार्यक्रम, व्यवसायाभिमुख शिक्षण, आवासीय विद्यालय, तकनीकी संस्थाओं में विशेष कोचिंग, भूमि सुधार कानूनों का क्रियान्वयन, अतिरिक्त भूमि का पिछड़ों में वितरण, वित्तीय सहायता हेतु अलग संस्थान, अन्य पिछड़े वर्ग हेतु अलग मंत्रालय आदि सुझाव भी आयोग के प्रतिवेदन में सम्मिलित है।

अन्त में आयोग का सुझाव है कि, आयोग की अनुशंसाओं के लागू करने के 20 वर्षों बाद इसकी समीक्षा की जानी चाहिये।

आयोग के एक सदस्य श्री एल० आर० नायक ने अन्तिम क्षणों में एक स्थान पर मतभेद प्रकट किया है। उनके अनुसार अन्य पिछड़ी जातियों को दो भागों में विभक्त किया जाना चाहिये (i) मध्यवर्ती पिछड़ी जातियां तथा (ii) अधिक पिछड़ी जातियाँ अर्थात् (i) Intermediate Backward Classes तथा (ii) Depressed Backward Classes.

विभिन्न राज्यों में पिछड़ा वर्ग आयोग

काका कालेलकर कमीशन की रिपोर्ट को अस्वीकार किये जाने के बाद अनेक राज्य सरकारों ने सामाजिक तथा शैक्षणिक पिछड़े वर्ग हेतु अनेक आयोगों का गठन किया। अब तक आन्ध्र, बिहार, गुजरात, जम्मू-कश्मीर, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, पंजाब, उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु, 10 राज्यों ने 15 कमीशनों या कमेटियों का गठन किया जिनकी अनुशंसा के आधार पर विभिन्न राज्यों में अन्य पिछड़ी जातियों के लिये आरक्षण किया गया है।

अन्य राज्यों में आरक्षण की स्थिति

Reservation for admission to UG courses and Actual Coverage of SC/ST students and their population : 1977-78

	विश्वविद्यालय संख्या	SC/ST Population	Reservation allowed	Actual Coverage	अन्य पिछड़ा वर्ग Other Backward Classes सेवा	शिक्षा
आन्ध्र प्रदेश	9	18·47	18	7·08	25	25
असम	3	20·03	20	12·32		
बिहार	9	23·63	20	6·74	20	20
गुजरात	8	20·85	20	9·87	10	10
हरियाणा	3	18·88	20	4.73	10	2
हिमाचल	1	27·42	20	6·95	5	2
जम्मू-कश्मीर	2	8·25	8	1·98	42	42
कर्नाटक	5	15·48	18	6 48	48	50
केरल	4	10·40	20	4·31	40	25
मध्य प्रदेश	10	37·36	33	7·04	25*	25
महाराष्ट्र	11	13·82	20	11·38	14	14
मेघालय	1	83·47	40	58 86		
उड़ीसा	4	38·19	20	6 58		
पंजाब	4	24 38	25	8·83	5	5
राजस्थान	4	28·52	20	7·55		
तमिलनाडु	5	18·86	18	7 90	50	50
उत्तर प्रदेश	20	21·83	20	10·98	15*	15
बंगाल	8	26·48	20	12·19		
दिल्ली	4	15·63	20	5·54		
अखिल भारतीय	115	22.54	.0	9.01		

Source: Mandal Commission Report

*उ.प्र और म.प्र. में मामला कोर्ट के विचाराधीन है।

Soursce : Facilities to SC/ST in Univerites & Colleges UGC, New Delhi.

असम और पाण्डिचेरी में OBC हेतु सरकारी सेवाओं में आरक्षण नहीं हैं, परन्तु शिक्षण संस्थाओं में कुछ आरक्षण किया गया है। राजस्थान, उड़ीसा, मेघालय और दिल्ली में न तो सरकारी सेवा और न ही शिक्षण संस्थाओं में किसी प्रकार का प्रावधान है।

आरक्षण से जुड़े कुछ प्रश्न

☐ क्या आरक्षण अनन्त काल तक चलने वाली व्यवस्था है ?

सेवा तथा शिक्षा में आरक्षण के सम्बन्ध में संविधान में काल सीमा का कोई उल्लेख नहीं हैं। परन्तु भारतीय संविधान लागू होने के समय अनुच्छेद 330, 332 तथा 334 के तहत लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में 10 वर्ष की कालावधि की समाप्ति तक SC और ST हेतु आरक्षण की व्यवस्था की गयी थी। वर्तमान में लोकसभा की 542 सीटों में से SC के लिए 78 और ST के लिये 38 तथा राज्य विधान सभाओं की 3997 सीटों में से 541 एवं 299 आरक्षित है।

10 वर्ष की अवधि पूरी होने पर दो बार 10-10 वर्षों के लिये आरक्षण को बढ़ाया जा चुका है। 1990 में यह अवधि पुनः समाप्त हो रही है। यदि 1990 में उसे पुनः न बढ़ाया जाय तो क्या आज भी कोई हरिजन, आदिवासी सामान्य सीट से चुनाव जीतकर आ सकता है ? मेडीकल, इन्जिनियरिंग या सरकारी सेवा में कितने लोग आ सकेंगे ? राज्य सभा और विधान परिषदों में आरक्षण नहीं है, परिणामतः वहाँ पर SC और ST का प्रतिनिधित्व नाममात्र का है। क्या आजादी के 38 वर्षों के पश्चात् भी अस्पृश्यता मिट गयी है ? दलितों के प्रति हेय दृष्टि समाप्त हो गयी है। कुँओं, मन्दिरों में समान अधिकार है ? सामाजिक समता स्थापित हो गयी ? अगर समाज का यह दुर्बल कोना सुदृढ़ नहीं हो पाया है तो क्या इसके लिये शेष समाज जिम्मेवार नहीं है ? आज भी आरक्षित स्थान रिक्त रह जाते हैं ? फिर इस आरक्षण को समाप्त करना कहाँ तक न्याय संगत है ?

आरक्षण के लिये कालावधि अवश्य निश्चित करनी चाहिये। परन्तु उस कालावधि में सामाजिक समता स्थापित हो। अस्पृश्यता मिटे। सभी समान स्पर्धा के स्तर पर आ जायेंगे, तब इस व्यवस्था को हटाना या न हटाना अप्रासंगिक बन जाएगा। परन्तु बिना समता के लक्ष्य को प्राप्त किये आरक्षण हटाना अनुचित होगा।

☐ आरक्षण के प्रतिशत की अधिकतम मर्यादा क्या हो ?

संविधान के आरक्षण सम्बन्धी अनुच्छेदों में आरक्षण की अधिकतम या न्यूनतम सीमा का कोई उल्लेख नहीं है। SC और ST के लिये केन्द्रीय सेवाओं में उनकी जनसंख्या के अनुपात में 15% और 7½ का% आरक्षण है। राज्यों में भी SC और ST की जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण है।

जिन राज्यों ने 'अन्य पिछड़ा वर्गों' के लिये भी आरक्षण का प्रावधान किया तो कई राज्यों में आरक्षण का प्रतिशत कुल सीटों का 50% से भी अधिक हो गया। कर्नाटक में वर्तमान में कुल आरक्षण 66 /. तमिलनाडु में 68·/. है। मध्य प्रदेश में 1984 में महाजन आयोग की अनुशंसा पर पहले से प्राप्त 49·/. आरक्षण में 29·/. की वृद्धि कर दी गयी, यानि कुल आरक्षण में 78·/. हो गया। जो न्यायालय में विचाराधीन है।

अतः कई राज्यों म यह समस्या उत्पन्न हो गयी कि आखिर कितना °/₀ कुल आरक्षण न्यायसंगत है। कर्नाटक में नागेन गौडा कमेटी की रिर्पोट के आधार पर राज्य सरकार ने 1962 में पहले से 15·/. SC और 3°/₀ ST के आरक्षण के अतिरिक्त 50°/₀ OBC के लिये निश्चित किया यानि कुल आरक्षण 68₀/° हो गया। सरकार के इस निर्णय के विरुद्ध बालाजी बनाम मैसूर राज्य में सर्वोच्च न्यायालय का मत था कि आरक्षण के प्रतिशत के सम्बन्ध में **समाज के कमजोर वर्ग का हित तथा सम्पूर्ण समाज के हित में सुसंगति होना आवश्यक है। अतः कोई भी विशेष प्रावधान 50₀/° से कम होना चाहिये।** इस आधार पर सर्वोच्च न्यायालय ने 78₀/° आरक्षण को अधिक करार करते हुए रद्द कर दिया।

मण्डल आयोग ने भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 50% के आरक्षण की मर्यादा को ध्यान में रखकर 'अन्य पिछड़े वर्गों' की संख्या 52% होने के बावजूद मात्र 27% आरक्षण का सुझाव दिया क्योंकि पहले से केन्द्रीय सेवाओं में SC और ST के लिये 22·5% का आरक्षण है।

परन्तु बालाजी बनाम मैसूर राज्य में सर्वोच्च न्यायालय के अधिकतम 50₀/° की मर्यादा की व्याख्या अन्य मुकदमों में अलग-अलग प्रकार से न्यायालयों ने की। केरल सरकार बनाम एम० एम० थामस के मामले में स्वयं सुप्रीम कोर्ट ने अपनी टिप्पणी में इसे नकार दिया है। सुभाषिनी बनाम मैसूर राज्य (AR, 1966 Mysore)

में न्यायालय का मत था कि बालाजी के मुकदमे में अधिकतम सीमा निर्धारण केवल उन्हीं आरक्षणों के लिये हैं जो अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत किये हैं। अर्थात 50·/. की सीमा केवल SC, ST और OBC के कुल आरक्षण हेतु है। कई राज्यों में विदेशी छात्र, स्वतंत्रता सेनानी, अवकाश प्राप्त सैनिक, विकलांग आदि के लिये आरक्षण का प्रावधान है जो अनुच्छेद 15(4) जिसमें सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़े लोगों के लिये आरक्षण की व्यवस्था है, के अतिरिक्त है।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय मानने के लिये सभी बाध्य नहीं है। इस कारण अनेक राज्यों में कुल आरक्षण 50·/. से अधिक है। परन्तु आरक्षण और खुली स्पर्धा के बीच सुसंगति के लिये कुल आरक्षण 50·/. से अधिक न हो, यही न्यायसंगत प्रतीत होता है।

☐ क्या ऊँची जातियों में गरीब नहीं हैं ? किसी भी जाति का गरीब क्यों न हो उसे आरक्षण का लाभ मिलना चाहिये ? यदि आरक्षण करना ही है तो उसका आधार आर्थिक होना चाहिये न कि सामाजिक या जातीय ?

अगर आधार आर्थिक होगा तब भी दलित ही आयेंगे क्योंकि गरीबों में भी अधिक गरीब, निरक्षरों में भी अधिक निरक्षर दलित ही हैं। लेकिन ऐसा होने नहीं दिया जायेगा। ऊँची जाति के ही गरीब इसका पूरा लाभ उठा ले जायेंगे, बेचारा दलित वहीं का वहीं रह जायेगा।

जो आर्थिक आधार पर आरक्षण की बात करते हैं, वे या तो भारत की जाति व्यवस्था से परिचित नहीं है या जान बूझकर पूरे प्रश्न को उलझाना चाहते हैं। वस्तुत: आरक्षण आर्थिक न्याय के लिये नहीं, सामाजिक प्रतिष्ठा के लिये आवश्यक है।

आर्थिक पिछड़ापन और सामाजिक पिछड़ापन दो भिन्न चीज है। जो जातियाँ या वर्ग सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा है, वही आर्थिक दृष्टि से भी पिछड़ा है। परन्तु आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा व्यक्ति या समूह सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से भी पिछड़ा है, ऐसा हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते।

आर्थिक पिछड़े व्यक्ति के पिछड़ेपन का कारण रोजगार का अभाव, धन की

कमी हो सकती है, जिसकी पूर्ति कर उसके आर्थिक संकट को दूर किया जा सकता है। परन्तु सामाजिक पिछड़ापन तो हिन्दू जाति व्यवस्था के निम्न स्तर पर उत्पन्न होने तथा सदियों से सत्ता, शिक्षा, सम्पत्ति के अधिकार से वंचित रहने के कारण उत्पन्न हुई है। इस सामाजिक पिछड़ेपन के कारण ही आर्थिक तथा शैक्षणिक पिछड़ापन पैदा हुआ है न कि आर्थिक पिछड़ेपन के कारण सामाजिक पिछड़ापन पैदा हुआ है ऐसे सामाजिक पिछड़े लोगों के पिछड़ेपन को केवल आर्थिक सुविधायें देकर दूर नहीं किया जा सकता।

वस्तुतः आरक्षण की अवधारण ऐसे सामाजिक रूप से पिछड़े लोगों को विशेष अवसर देने हेतु न कि केवल गरीब लोगों को अवसर देने हेतु उत्पन्न हुई। हाँ, सामाजिक पिछड़ेपन के साथ-साथ शैक्षणिक तथा आर्थिक कारणों का भी अवश्य विचार किया जाना चाहिए। परन्तु केवल आर्थिक आधार पर आरक्षण 'विशेष अवसर' की मूल संकल्पना के विरुद्ध है। अतः सामाजिक, शैक्षणिक तथा आर्थिक इन तीनों आधार पर पिछड़ेपन को निश्चित किया जाना चाहिये। ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न गरीब बालक तथा हरिजन समुदाय के गरीब बालक यद्यपि दोनों गरीब हैं परन्तु दोनों की गरीबी में विशाल अन्तर है। ब्राह्मण बालक यदि घर-घर जाकर याचना करता है तो उसे लोग खाद्यवस्तु भोग मानकर, पवित्र समझकर देते हैं, वहीं अनुसूचित जाति को प्राप्त खाद्यवस्तु भीख बन जाती है। भीख और भोग में बड़ा अन्तर है और यह अन्तर कौन किस जाति में पैदा हुआ, इस कारण है। अतः दोनों की गरीबी-गरीबी होते हुए भी उसमें काफी अन्तर है।

ऊँची जाति के गरीब लोगों के विकास हेतु सभी प्रकार के प्रयत्न किये जाने चाहिये, परन्तु उसका सम्बन्ध आरक्षण से कम और कुल आर्थिक विकास से अधिक है। 40 /. से अधिक की आबादी जहाँ गरीबी रेखा के नीचे है, उस देश में अधिकांश गरीब हैं। परन्तु आरक्षण गरीबी को दूर करने का उपाय नहीं है। फिर संविधान के अनुच्छेद 15(4) जिसके अन्तर्गत आरक्षण का प्रावधान है, उसमें भी केवल 'सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछड़ेपन' का उल्लेख है।

☐ क्या जाति पिछड़ेपन के निर्धारण का आवश्यक तत्व है ?

'अनुसूचित जाति' तथा 'अनुसूचित जनजाति' के पिछड़ों में सम्मिलत करने

पर कोई विवाद नही है। 1950 में संविधान लागू करते समय कतिपय जातियों, नस्लों और जनजातियों को जिनमें सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक पिछड़ापन 'छुआछूत' के परम्परागत व्यवहार में से उत्पन्न हुआ है, के आधार पर एक संशोधित सूची तैयार की गयी।

संविधान लागू होने के बाद 'अनुसूचित जन-जातियाँ' नाम उन समुदायों को निर्दिष्ट करने के लिये दिया गया जो जनजाति मूल की है, जिनका रहन-सहन आदिम प्रकार का है, जो दूरस्थ और अपेक्षाकृत दुर्गम क्षेत्रों में रहती हैं और जिनमें सभी प्रकार का सामान्य पिछड़ापन पाया जाता है।

SC और ST के अलावा भी देश का काफी बड़ा हिस्सा पिछड़ा है। इस पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत कौन रहे तथा इसके निर्धारण का आधार क्या हो, इसको लेकर अत्यन्त विवाद है।

संविधान के अनुच्छेद 15(4) में सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछड़े वर्ग का उल्लेख है। सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारण में अधिकांश आयोगों ने 'जाति' को महत्वपूर्ण आधार माना है। इस कारण सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारिण में जाति की भूमिका पर न्यायालयों में अनेक मुकदमे हुए। कुछ लोगों का यह कथन है कि जाति को आधार मानने से जातिवाद को बढ़ावा मिलेगा तथा यह असंवैधानिक है।

परन्तु भारत में सामाजिक पिछड़ेपन का मुख्य कारण ऊँच-नीच पर आधारित जाति व्यवस्था है। अतः अनेक न्यायालयों का यह मत है कि पिछड़ेपन के निर्धारण में जाति का विचार किया जाना भारतीय सन्दर्भ में आवश्यक है। जाति व्यवस्था वस्तुस्थिति है जिससे आँखे नहीं मूँदी जा सकती।

(AIR 1968 S.C.1012) पी० राजेन्द्र बनाम मद्रास राज्य में सर्वोच्च न्यायालय ने इस विषय पर ऐतिहासिक निर्णय दिया है। उसके अनुसार यह नहीं भूलना चाहिये कि 'जाति भी नागरिकों का एक वर्ग है और यदि जाति सम्पूर्णतः सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी है तो ऐसी जाति के लिए आरक्षण इस आधार पर किया जा सकता है कि यह जाति अनुच्छेद 15(4) के अर्थ में सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछड़े नागरिकों का वर्ग है।'

अधिकांश आयोगों ने पिछड़े वर्ग की सूची के नाम पर जातियों की सूची

प्रदान की है। न्यायालय के अनुसार यह असंवैधानिक नहीं है परन्तु आयोग को यह संतुष्ट करना होगा कि उपरोक्त जातियाँ सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी हैं तथा इसे सिद्ध करने के लिए आयोग ने पर्याप्त वस्तुपरक परीक्षा की है।

अतः सामाजिक, शैक्षिक तथा आर्थिक इन तीनों दृष्टि से पिछड़े समूहों को पिछड़ा कहा जा सकता है तथा सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारण में 'जाति' यह महत्वपूर्ण आधार है, परन्तु यह एकमात्र आधार नहीं है।

☐ आरक्षण से जातिवाद को बढ़ावा मिला है ? जातीय आरक्षण से जातिवाद कैसे मिटेगा ?

जातिवाद उच्चवर्णीय समाज का सृजन है, वह समाप्त भी वहीं से होगा। जातिवाद की समाप्ति का प्रारम्भ निम्न जातियों से नहीं हो सकता। जाति पिछड़ेपन की ऐतिहासिक पहचान है, आज के समाजशास्त्रीय आँकड़े इस पहचान के गवाह हैं। जातिवाद मिटाने के नाम पर अपने समाज की विकलांगता को अनदेखा करना या तो भोलापन है या निहित स्वार्थी मानसिकता। जातिवाद की जड़ विवाह संस्था में है। जब तक विवाह संस्था का जातिवाद को सम्बल प्राप्त है, दुनिया का कोई कानून एवं समाज सुधार उसे समाप्त नहीं कर सकता है। राजनीति या अर्थनीति में परिलक्षित जातिवाद मौलिक नहीं हैं, सामाजिक जातिवाद की प्रतिछाया मात्र है। छाया से लड़ना भूल है। जिनको जातिवाद मिटाने में रूचि है, वे विवाह संस्था जो समाज की सबसे सबल सामाजिक संस्था है, से जातिवाद को मिटाने का प्रयत्न करना चाहिये। विवाह संस्था से हट जाने के बाद जातिवाद कहीं नहीं ठहर सकता।

आरक्षण व्यवस्था समाप्त कर जातिवाद को समाप्त करने का तर्क भोला तर्क है। जब तक जाति व्यवस्था है और जब तक जाति में जन्म के कारण सामाजिक प्रतिष्ठा का निर्धारण होगा तब तक पिछड़ेपन के निर्धारण में जाति का विचार करना आवश्यक रहेगा।

☐ क्या बड़े पैमाने पर आरक्षण के कारण उन प्रतिभावान छात्रों के मन में ईर्ष्या या कटुता उत्पन्न नहीं होगी, जो केवल आरक्षण के कारण प्रवेश से वंचित कर दिये गये ?

द्विजों या सवर्णों का आरक्षण के प्रति गुस्सा सही प्रश्न पर गलत सोच का परिणाम है। गुस्सा इसलिये है कि नौकरियाँ नहीं मिल रहीं हैं, पर ऐसा वर्तमान आर्थिक नीतियों के कारण है न कि आरक्षण के कारण। वर्तमान नीतियों से रोजगार नहीं उत्पन्न हो रहे हैं। यदि सभी पद अनारक्षित कर दिये जाये तो भी उच्च वर्ग के सभी प्रतिभावान छात्र प्रवेश या रोजगार नहीं पा सकेंगे। मेडीकल, इन्जिनियरिंग में 80%. अंक आने के पश्चात् भी प्रवेश नहीं मिल पाता। इसका कारण आरक्षण नहीं बल्कि कालेजों की कम संख्या और कालेजों में कम सीटें हैं। यदि और कालेज खोलने की माँग उठायी जाय तभी सभी लोगों को प्रवेश मिल सकता है।

अतः झगड़ा कुछ हजार नौकरियों या प्रवेश का है कि वह किसे मिले ? उपाय 'पूर्ण रोजगार' है। सभी मिलकर 'पूर्ण रोजगार' के लिये संघर्ष करें तो आरक्षण विवाद स्वयं समाप्त हो जायेगा। वस्तुतः आरक्षण विवाद बेरोजगारी के कारण अधिक तीव्र हुआ है।

आरक्षण के कारण कुछ लोगों के मन में जलन होती होगी। परन्तु ईर्ष्या के कारण किसी सामाजिक सुधार को स्थगित नहीं किया जा सकता। जमींदारी प्रथा उन्मूलन के समय या अंग्रेजों को देश से बाहर निकालते समय प्रभावित लोगों को जलन हुई होगी। परन्तु इस कारण किसी अन्याय या अव्यवस्था को जारी नहीं रखा जा सकता। अभी तक तो सेवा, शिक्षा में सवर्ण जातियों का ही अघोषित आरक्षण था। अब यदि इसमें से कुछ हिस्सा अपने पद-दलित, उपेक्षित बान्धवों को देना ही पड़े तो इसे सहर्ष स्वीकार करना चाहिये।

☐ यह कहाँ का न्याय है कि एक 45% अंक प्राप्त व्यक्ति को मेडिकल में प्रवेश मिल जाता है वहीं 70% अंक प्राप्त वंचित रह जाता है ? क्या इससे राष्ट्र अधिक प्रतिभावान लोगों की सेवा से वंचित नहीं रह जाता ? क्या प्रतिभा का मापदण्ड परीक्षा में प्राप्त अंक नहीं हैं ? फिर योग्य लोगों के बजाय अयोग्य लोगों को स्थान क्यों ?

यदि देश में 'पूर्ण रोजगार' की व्यवस्था रहती तो आरक्षण की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। आरक्षण का अर्थ ही है कि रोजगार कम है लोग अधिक हैं। अब प्रश्न है 'प्रतिभा' (Merit) क्या है ? प्रतिभा किसे कहेंगे ? प्रतिभा का मापदण्ड क्या है ?

आज योग्यता/प्रतिभा का मापदण्ड केवल परीक्षा में प्राप्त अंक है। परन्तु क्या ये अंक ही केवल किसी की प्रतिभा के वास्तविक द्योतक हैं। मान लिया जाय मोहन और लालू दो छात्र हैं। मोहन उच्च मध्यम श्रेणी परिवार से आता है, जिसके अभिभावक शिक्षित हैं पब्लिक स्कूल में पढ़ता है, उसका मार्ग दर्शन करने हेतु योग्य व्यवस्था है, पढ़ने का कमरा अलग है, उसके मित्र, उसका वातावरण भी उसी प्रकार का है। उसके रिश्तेदार प्रभावशाली पदों पर हैं तथा उसे पढ़ाई के अलावा पत्र-पत्रिका, खेल-कूद, अन्य रूचियों के लिये भी पर्याप्त प्रावधान है।

वही लालू गाँव से आया हुआ, पिछड़ी जाति में उत्पन्न, अशिक्षित अभिभावक का पुत्र है। वह ट्यूशन कर, लालटेन में, बिना किसी योग्य मार्गदर्शन के किसी तरह से अध्ययन कर रहा है। उसे कभी प्रोत्साहन नहीं मिला तथा उसका उच्चारण सामान्य है, पहनावा देहाती है।

यद्यपि जन्म के समय दोनों की बुद्धि समान थी तो भी दोनों के सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक वातावरण के कारण लालू किसी भी स्पर्धा में मोहन का मुकाबला नहीं कर पायेगा। यदि मोहन को लालू से 50% अधिक अंक प्राप्त हो तो भी यह नहीं कहा जा सकता है कि मोहन उससे 50% अधिक बुद्धिमान है। यदि प्रतिभा का अर्थ साहस कठिनाईयों से मुकाबला करने का सामर्थ्य, दृढ़ता भी है तो क्यों नहीं लालू और मोहन को प्राप्त अंकों में उनको प्राप्त सुविधाओं एवं कठिनाईयों के अनुसार तरजीह दी जाय। अब यदि दोनों के उत्पन्न परिवारों में उनका स्थान बदल दिया जाय तो परिणाम क्या होता ?

यह सत्य है कि आरक्षण के कारण कम योग्यता के लोग आ सकते हैं, परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि अयोग्य लोग आते हैं। आरक्षण की व्यवस्था केवल प्रवेश के स्तर पर है। ऐसा नहीं है कि परीक्षा में 50% अंक पाने वाले छात्र को आरक्षण के कारण प्रथम श्रेणी घोषित कर दिया जाता है। कई बार बी० ए० में द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण छात्र एम० ए० में प्रथम श्रेणी प्राप्त कर लेता है तथा कई बार इसके विपरीत भी होता है। यदि एक छात्र बी० ए० की परीक्षा में तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण होता है तो इसका अर्थ है कि उसमें कम से कम बी० ए० की न्यूनतम योग्यता है। वह प्रथम श्रेणी प्राप्त छात्र से कम योग्य होगा, परन्तु वह अयोग्य है ऐसा नहीं कहा जा सकता।

इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि मध्य प्रदेश के समान केवल परीक्षा में

बैठना ही प्रवेश का आधार मान लिया जाय। प्रत्येक प्रवेश या नियुक्ति हेतु कुछ न्यूनतम अंक अवश्य निर्धारित करना चाहिये ताकि स्तर भी कायम रह सके। गुजरात में OBC के लिये बक्शी आयोग की स्पष्ट अनुशंसा थी कि 55% से कम अंक प्राप्त छात्र को प्रवेश नहीं मिल सकेगा तथा आरक्षित और अनारक्षित सीटों के अंकों में 5% से अधिक का अन्तर न हो।

योग्यता को बनाये रखने के लिये न्यूनतम अंक अवश्य निर्धारित हो, परन्तु यह भी ध्यान रखना होगा कि 'प्रतिभा', 'समान अवसर' कहीं शोषण, विषमता का कारण न बन जाये।

☐ क्या आरक्षण का लाभ पिछड़ी जातियों के कुछ सम्पन्न लोग या सम्पन्न जातियाँ ही नहीं उठा रही हैं? क्या इसका लाभ पिछड़े वर्ग के निम्नतर लोगों तक पहुँचा है? जगजीवनराम जैसे लोगों के लड़कों को आरक्षण का लाभ क्यों?

यह समाज विकास का नियम है कि अधिक उन्नत समुदाय ही सदैव अन्यों की अपेक्षा किसी भी सुधार का लाभ पहले उठाता है। दैनन्दिन जीवन में भी जो अधिक शिक्षित हैं, सम्पन्न हैं विकास योजनाओं का अधिकतम लाभ उठाते दिख पड़ते हैं। अंग्रेजी शिक्षा का अधिकतम लाभ बंगाल, मद्रास के लोग और उसमें भी ब्राह्मण समुदाय ने ही अधिक उठाया। यही स्थिति पिछड़ी जातियों की है। पिछड़े में भी जो अधिक उन्नत हैं वे ही आरक्षण का लाभ उठा रहे हैं। अनुसूचित जाति में अनेक जातियाँ है, परन्तु उनमें महाराष्ट्र में महार, उत्तर प्रदेश, बिहार में चमार, पासी, धोबी, जाटव आदि ही अधिकतम लाभ उठाते दिखाई देते हैं। मेहतर, भंगी, डोम आदि नाममात्र को दिखाई देते हैं। परन्तु उसके बावजूद भी आरक्षित स्थान प्रत्येक स्तर पर खाली रह जाते हैं। दलितों में जगजीवनराम जैसे अँगुली पर भी गिनने लायक नहीं हैं, बाकी सभी कल्लू, मल्लू, होरी, पोदी ही हैं। अभी तो समस्या यह है कि जगजीवन राम जैसे लोगों तथा अन्य उन्नत जातियों के द्वारा भी ये स्थान कैसे भरे जायें?

अनेक राज्यों ने OBC के आरक्षण में यह व्यवस्था अवश्य की है, जिससे कुछ उन्नत जातियाँ ही सब लाभ न उठा सकें। बिहार में मुँगेरी लाल आयोग की

अनुशंसा पर 94 'अति पिछड़ा' को 12% तथा 128 'पिछड़ा वर्ग' की जातियों को मात्र 8% का आरक्षण दिया गया। उसमें भी यह प्रावधान किया गया कि आय-कर की न्यूनतम सीमा से अधिक आय वालों को यह लाभ नहीं मिलेगा। इसी प्रकार गुजरात में राणे कमीशन ने OBC के लिये अनुशंसा की कि उन्हीं सदस्यों को आरक्षण का अधिकारी बनाया जाये जिनके परिवारकी वार्षिक आय दस हजार से कम है। तमिलनाडुऔर कर्नाटक में भी ऐसी व्यवस्था की गयी कि पिछड़े वर्गों के उन्नत समुदाय केवल लाभ न उठाये और यह धीरे धीरे निम्नतर स्तर तक कैसे पहुंचे।

अत: समय समय पर समीक्षा की जानी चाहिये कि आरक्षण का लाभ उन्नत जातियों में केन्द्रित न हो और उसका प्रवाह निम्नतर स्तर तक हो। परन्तु अभी तो समस्या यह है कि आरक्षित स्थान कैसे भरे जायें? समस्या यह उतनी नहीं है कि कुछ जातियाँ अधिक लाभ उठा रही हैं बल्कि यह है कि स्थान रिक्त रह जाते हैं? आरक्षण देकर समाज तथा सरकार ने अपने कर्तव्य की इतिश्री मान ली। यह प्रयास ही नहीं हुआ कि किस प्रकार ये वर्ग शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक दृष्टि से उन्नत हों ताकि आरक्षण का भरपूर लाभ उठा सकें। परिणामत: एक ओर उच्च वर्गों में ईर्ष्या उत्पन्न हो रही है तथा दूसरी ओर पर्याप्त उम्मीदवारों के अभाव में स्थान रिक्त रह जाते हैं।

☐ क्या आरक्षण द्वारा बड़ी संख्या में कम अंक प्राप्त लोगों की नियुक्ति से प्रशासन की दक्षता एवं स्तर में ह्रास नहीं होगा?

यह भय कि पिछड़े वर्ग के लोगों की नियुक्ति से प्रशासन की कार्यपटुता में कमी आयेगी, एक सीमा तक सही हो सकता है। परन्तु संविधान के अनुच्छेद 335 में पिछड़े वर्गों के दावे को ध्यानमें रखते समय प्रशासन की कार्यपटुता को बनाये रखनेका स्पष्ट उल्लेख है'। जस्टिस कृष्ण अय्यर ने एक मुकदमें के निर्णय में कहा 'सच तो यह है कि विभिन्न श्रेणियों में कुल अधिकारियों में से 5-10% के स्तर से नीचे होने की वजह से प्रशासनिक व्यवस्था की कुशलता में कोई खास फर्क नहीं पड़ता। और कई दृष्टियों से गुणों की बात कहने वाले लोग सीधी सादी जनजातिय तथा छोटी जातियों के लोगों से ज्यादा, खतरनाक है।'

आज देश के मेडिकल, इन्जिनियरिंग, सरकारी सेवाओं में अधिकांश वे लोग हैं जो खुली स्पर्धा तथा तथाकथित प्रतिभा से आये हैं। परन्तु क्या ये कहा जा सकता है कि ये सभी प्रतिभावान लोग कुशल, समर्पित, निष्ठावान हैं? देश की अधिकांश सेवाओं में इन प्रतिभा सम्पन्न लोगों के रहते आज देश की यह दशा क्यों है? अगर कोई देश आभिजात्य की काबिलियत पर ही चलता है, तो अंगरेजो से ज्यादा काबिल कोई नहीं था। उन्होंने भारत को आधुनिकता दी। सिविल प्रशासन दिया। रेल दी। उन्होंने कहा कि भारतीय शासन करने योग्य नहीं हैं। हम चले जायेंगे तो देश टूट जायेगा। उन्हें क्यों जाने दिया?

दक्षिण के अधिकांश राज्यों में 50% से अधिक का आरक्षण वर्षों से है। परन्तु ऐसा नहीं कह सकते कि वहां की सेवा के स्तर में केवल इस कारण ह्रास हुआ है। बल्कि आज भी दक्षिण के राज्य उत्तर भारत की तुलना में अधिक कार्यपटु हैं।

इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि आरक्षित कोटे से आये लोग अधिक अच्छा करेंगे। सम्भावना इस बात की है कि सामाजिक, सांस्कृतिक पिछड़ेपन के कारण वे अन्य लोगों की तुलना में कुछ कम योग्य हो सकते हैं। परन्तु उन्हें एक अन्य सुविधा भी है कि देश की अस्सी प्रतिशत गरीब जनता के दुःख-दर्दों की उन्हें प्रथमतया जानकारी है। जस्टिस कृष्णा अय्यर के शब्दों में ही 'अगर राज्य सेवा प्रदान करने के लिये है और लाखों लोग उसके उपभोक्ता हैं तो आभिजात्य वर्ग, जिसकी जनसमुदाय के प्रति सहानुभूति समाप्त हो गयी है, भारतीय जनता की दृष्टि से सरकार चलाने के लिये सबसे कम उपयुक्त है और राजकाज चलाने के लिये सबसे कम गुणसम्पन्न है। पिछड़े वर्ग के उम्मीदवार जिन्हें जन्म से ही ग्रामीण परिस्थितियों की कठोरता का अनुभव होता है, वे एक अर्थ में उन लोगों की अपेक्षा जो समृद्ध स्थिति में पले बढ़े हैं और अपने चारों ओर के जनसमुदाय की परिस्थितियों के प्रति बेपरवाह हैं, अधिक उपयुक्त हैं।'

☐ क्या कुछ हजार लोगों को आरक्षण द्वारा नियुक्ति या प्रवेश से पिछड़े वर्गों की माली हालत में सुधार हो सकता है ?

यह सही है कि कुछ हजार आरक्षण कर देने मात्र से ही पिछड़ी जातियों की माली हालत में सुधार नहीं आ जायेगा। भारत में सरकारी नौकरी प्रारम्भ से ही शक्ति और प्रतिष्ठा का प्रतीक रहा है। सेवाओं में उनके प्रतिनिधित्व का प्रतिशत बढ़ाकर हम देश के शासन में उनकी सहभागिता का तत्काल एहसास करा सकते हैं। सामाजिक पिछड़ेपन के विरुद्ध संघर्ष का महत्वपूर्ण हिस्सा पहले पिछड़े लोगों के मन में लड़ा जाना है। किसी पिछड़ी जाति के व्यक्ति के कलक्टर/डाक्टर बनने से उसके परिवार को आर्थिक लाभ मिलता है परन्तु उसको सम्पूर्ण जाति में मनोवैज्ञानिक रूप से सामाजिक श्रेष्ठता का भाव उत्पन्न होता है। उन्हें एहसास होता है कि हमारी जाति का लड़का भी बड़ा बन सकता है, वे भी सत्ता, शिक्षा के गलियारे में पहुँच सकते हैं। यह सम्पूर्ण समुदाय की हीन भावना को दूरकर उनमें आत्म विश्वास पैदा करने में सहायक होता है।

आरक्षण के कारण झोपड़-पट्टी में रहने वाला भी सोच सकता है कि मेरा बेटा डाक्टर, वकील बन सकता है। और वह उस दिशा में प्रयत्नशील होता है। अन्यथा पत्थर तोड़ने वाला अपने बेटे को पत्थर तोड़नेवाले से अधिक बनाने की सोच भी नहीं पाता। अतः आरक्षण पिछड़े वर्गों के उत्थान का केवल एक उपाय है, एक मात्र उपाय नहीं। आरक्षण का लाभ तो इन वर्गों के केवल कुछ शिक्षित लोग ही उठा पायेंगे। शेष करोड़ों हेतु अन्य अनेक उपाय करने होंगे।

☐ पिछड़े लोगों को हर प्रकार की सुविधा मिलनी चाहिए। हमारा विरोध सुविधाओं से नहीं आरक्षण से है।

इस बात की जिम्मेदारी कौन लेगा कि कल सुविधाओं का विरोध नहीं होगा ? क्या आज दलित छात्रों के लिये पृथक छात्रावास, निःशुल्क शिक्षण, छात्रवृत्ति आदि ईर्ष्या का कारण नहीं हैं ? क्या यह आम चर्चा का विषय नहीं है कि अरे ! ये तो सरकारी मेहमान हैं ? देखिये ! कितनी सुविधायें इन्हें मिल रहीं हैं ? हमें यह सुविधा क्यों नहीं ?

प्रश्न केवल आरक्षण का नहीं है ? प्रश्न है दलितों की ओर देखने का हमारा दृष्टिकोण क्या है ? इस उच्च मानसिकता को बिना बदले कल सुविधा भी आन्दोलन का कारण न बनेगा ? क्या चमार और भंगी शब्द आज गाली के पर्याय नहीं है। एक दलित के उच्चाधिकारी बनते ही समाज में कौन सी चर्चाएँ होती हैं ? इस मानसिकता के रहते पिछड़े लोगों के विकास के किसी भी कदम का 'समान व्यवहार' 'प्रतिभा' के नाम पर विरोध होता रहेगा ?

पुनः क्या सारी सुविधाएँ देने पर भी पिछड़े वर्ग का व्यक्ति सदियों से विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति का मुकाबला कर पायेगा ? ऐसा निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता। जीवविज्ञान भी आनुवांशिकता को स्वीकार करता है। एक ऐसा बालक जिसका परिवार सदियों से अशिक्षित है, निम्न अप्रतिष्ठित पेशों में संलग्न हीन भाव से ग्रसित है, उसे यदि सभी प्रकार की सुविधाएँ दी भी जाँय (जो असम्भव हैं) तो भी शायद वह कुछ पीछे रह जायेगा। हां, यदि दो-चार पीढ़ी उसे मौका मिले तो वह किसी से पीछे नहीं रहेगा। आज की तथाकथित उच्च जातियों को सैकड़ों वर्षों से जो सुविधा प्राप्त हैं, वह यदि इन्हें भी मिली होती तो स्थिति कुछ भिन्न होती। पैदा होते ही एक की पूँजी है गरीबी, अप्रतिष्ठा, अस्पृश्यता, पिछड़ापन वहीं दूसरे की पूँजी है प्रतिष्ठा, ऊँची जाति, संस्कार, सम्पत्ति का अधिकार। पैदा होते ही जहाँ इतना अन्तर है वहाँ दलित केवल सुविधाओं से ही आगे नहीं बढ़ सकता। उसे सुविधा के साथ संरक्षण भी चाहिये। बिना संरक्षण के केवल सुविधा का कोई अर्थ नहीं।

☐ क्या आरक्षण से एक नया दलित अभिजात्य वर्ग नहीं उत्पन्न हुआ है ? इससे सदैव पिछड़े बने रहने की मानसिकता उत्पन्न नहीं होगी ।

सामान्यत: शिक्षित, उच्च पद पर आसीन, सम्पन्न व्यक्ति अपनी जाति, परिवार, गांव के ही गरीब, अशिक्षित लोगों को हेय निगाह से देखने लगता है। जिस ग्रामीण पृष्ठभूमि या गरीबी में पलकर बड़ा हुआ है, उसको भूलकर वह अभिजात्य वर्ग में प्रविष्ट हो जाता है। ऐसे में यदि पिछड़ा वर्ग का व्यक्ति भी अपने मूल परिवेश से कट जाता है तो कोई आश्चर्य नहीं ? यह Elitism Brain Drain, मानवीय संवेदना से शून्य मूल्यहीनता, 'स्व' का विस्मरण वर्तमान विकृत शिक्षा व्यवस्था एवं सामाजिक परिवेश की उपज है। यह 'नया दलित अभिजात्य वर्ग' आरक्षण के कारण नहीं तो शिक्षा पद्धति के कारण उत्पन्न हुआ है। अत: निदान आरक्षण की समाप्ति नहीं बल्कि शिक्षा व्यवस्था में आमूल परिवर्तन है। अन्यथा बिना आरक्षण प्राप्त व्यक्ति भी क्यों अभिजात्य बन जाता है ?

सुविधा को बनाये रखने की आड़ में सदैव पिछड़े बने रहने की मानसिकता उत्पन्न होने का खतरा अवश्य है ? दुर्भाग्यवश पिछड़े वर्ग को नेताओं ने अपनी स्व-जातियों को कभी इस बात के लिये प्रेरित नहीं किया कि एक बार सम्पन्नता प्रतिष्ठा मिलने पर स्वयंमेव आरक्षण की बैशाखी छोड़ दें। दूसरी ओर उच्च वर्ग द्वारा आरक्षण का विरोध करने के कारण स्वयं को पिछड़ा बनाये रखने की प्रवृति और प्रबल हुई। समाज के सम्यक् विकास के लिये उच्च और निम्न दोनों वर्गों को अपना दृष्टिकोण बदलना होगा।

☐ अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद की मद्रास में २५-२८ मई १९८५ को सम्पन्न राष्ट्रीय कार्यकारी परिषद की बैठक में पारित प्रस्ताव ।

आरक्षण और विद्यार्थी परिषद

भारतीय समाज व्यवस्था में ऊँच नीच पर आधारित जन्मना जाति व्यवस्था ने एक ऐसी विषमता को जन्म दिया जिसमें गुण की अपेक्षा जाति व्यक्ति की प्रतिष्ठा निर्धारित करने में अधिक महत्वपूर्ण होती है। प्राचीनकाल की इस व्यवस्था में बीच के कालखण्ड में अनेक विकृतियां प्रविष्ट हो गयीं। कुछ जातियों

को शिक्षा, सम्पत्ति, सत्ता के अधिकार से वंचित कर दिया गया / ये जातियां समाज में अत्यन्त निम्न, अस्पृश्य, हीन भाव से ग्रस्त होकर, सामान्य मनुष्य के अधिकारों से वंचित, समाज की मुख्य धारा से अलग अलग अत्यन्त निकृष्ट पेशे में जीवन यापन के लिये वाध्य कर दी गयी ।

सदियों से उपेक्षित ये समूह समाज के विशेषाधिकार, प्राप्त वर्गों के साथ खुली स्पर्धा में मुकावला नहीं कर सकते । असमान लोगों के लिये समान अवसर अन्ततः विषमता को ही जन्म देता है । जब हम एक कमजोर और एक मजबूत की समान स्तर पर स्पर्धा के लिये वाध्य करते हैं तो इसका अर्थ है कि हम प्रारम्भ से ही मजबूत के पक्ष में पासा रखकर स्पर्धा का ढोंग कर रहे हैं जिसमें कमजोर की पराजय निश्चित है। किसी भी समाज की मानवीयता का निर्धारण इस बात से होता है कि वह अपने कमजोर, अपग, कम योग्य लोगों को कितना संरक्षण प्रदान करता है। इस सरक्षण को प्रदान करते समय शेष समाज के साथ विभेदमूलक व्यवहार हो सकता है। परन्तु इन लोगों को शेष समाज के समकक्ष लाने के लिये विभेदमूलक संरक्षण आवश्यक है । अवसर की समानता से परिणाम की समानता' अधिक महत्वपूर्ण है। समान परिणाम लाने के लिये असमान अवसर की आवश्यकता पड़ सकती है। इसी चिन्तन में से समाज के कमजोर, उपेक्षित वर्गों के लिये आरक्षण की कल्पना उत्पन्न हुई ।

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद का स्पष्ट मत है कि अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़े वर्गों के लिये आरक्षण ऐतिहासिक अनिवार्यता है अन्यथा देश के बहुसंख्यक पिछड़े लोगों को हम कभी शिक्षा सम्पत्ति सत्ता में भागीदार नहीं बना पायेंगे । यद्यपि संविधान में संसद एवं विधान मण्डलों में आरक्षण हेतु १० वर्ष की अवधि निर्धारित की गयी थी । १९८० में इस अवधि को पुनः १० वर्ष के लिये बढ़ाया गया। अब इस आरक्षण को समाप्त करने की माँग उठ रही है। हम उच्चतम न्यायालय के हाल के इस निर्णय से सहमत हैं कि अभी आरक्षण को और कम से कम १५ वर्ष तक चलाये जाने की आवश्यकता है। आरक्षण कोई स्थायी व्यवस्था नहीं है, यह अस्वस्थ समाज का लक्षण है। परन्तु जबतक समाज के ये वर्ग शेष समाज के समकक्ष नही आते तब तक इस व्यवस्था को लागू रखे जाने की आवश्यकता है ।

इस संदर्भ में गुजरात के आरक्षण विरोधी आन्दोलन की सम्पूर्ण आरक्षण को समाप्त करने की माँग से अभाविप पूर्णतया असहमत है । आन्दोलन कारियों की हठधर्मिता तथा माधव सिंह सोलंकी की क्षुद्र राजनीतिक महत्वाकांक्षा ने पूरे गुजरात को गृह युद्ध की सी स्थिति में ला खड़ा कर दिया है । गुजरात में अन्य पिछड़े वर्ग के लिये बढ़ाये गये १८% आरक्षण १६ मार्च को ही एक वर्ष के लिए स्थगित किए जाने तथा उसे एक समिति को सुपुर्द करने के निर्णय के बाद इस आन्दोलन का कोई औचित्य नहीं ? अभाविप गुजरात के आन्दोलनकारियों से अपील करती है कि वे सम्पूर्ण आरक्षण समाप्ति की माँग को छोड़ कर अपने आन्दोलन को तत्काल स्थगित कर वार्ता द्वारा आरक्षण से जुड़े अन्य प्रश्नों को सुलझाने का प्रयास करें ।

अभाविप आरक्षण को राजनीतिक सत्ता प्राप्ति का हथकण्डा बनाये जाने का कड़ा विरोध करती है। गुजरात एवं मध्यप्रदेश में ठीक विधान सभा चुनाव के पूर्व आरक्षण को बढ़ाए जाने की घोषणा एक अत्यन्त घिनौना राजनीतिक ओछापन है। राज कमीशन की रिपोर्ट को बिना प्रकाशित किए तथा अन्य दलों पक्षों से बिना विचार विमर्श किए आरक्षण को लागू करना सरकार की राजनीतिक मंशा को बेनकाब करती है। सरकार पिछड़े वर्गों के लिए कितनी चिन्तित हैं वह इस से ही स्पष्ट है कि चुनाव से आरक्षण का अधिकतम लाभ उठाकर उसे चुनाव के तुरन्त बाद स्थगित भी कर दिया गया ।

वर्तमान में देश के दस से अधिक राज्यों में SC और ST के अलावा अन्य पिछड़े वर्ग (OBC) के लिये आरक्षण लागू हैं। मण्डल कमीशन की रिपोर्ट संसद के पटल पर प्रस्तुत है। अधिकांश राज्यों में विवाद इस बात पर है कि पिछड़ा कौन है तथा उसके पहचान का आधार क्या हो ? वस्तुत: आज पिछड़ेपन के निर्धारण का आधार राजनीति अधिक है सामाजिक शैक्षणिक गौण है। परिषद का स्पष्ट मत है कि पिछड़ेपन का निर्धारण केवल **आर्थिक** या केवल **सामाजिक** आधार पर नहीं हो सकता। सामाजिक आर्थिक एवं शैक्षणिक पिछड़ापन ही पिछड़ापन की कसौटी का आधार हो सकता है। साथ ही सामाजिक पिछड़ेपन के

निर्धारण में जाति भी एक महत्वपूर्ण कसौटी है परन्तु यह एकमात्र कसौटी नहीं होनी चाहिये।

आरक्षण की अधिकतम सीमा, योग्यता एवं स्तर कोवनाये रखते हुए आरक्षण का प्रावधान, आरक्षण के कारण पिछड़े वर्ग में पिछड़े बने रहने की मानसिकता, पिछड़े वर्ग के अधिक सम्पन्न लोग ही आरक्षण का लाभ न हड़प लें, प्रोन्नति में आरक्षण आदि ऐसे अनेक विषय हैं जिन पर सम्पूर्ण देश में आम बहस के द्वारा आम सहमति उत्पन्न किये जाने की आवश्यकता है। परिषद का मत है कि सभी पक्षों, दलों, वर्गों के मध्य सहमति उत्पन्न किये बिना किसी भी राज्य में न तो नवीन आरक्षण लागू किया जाय और न ही पहले से लागू आरक्षण के प्रतिशत में वृद्धि की जाय।

पिछड़े वर्गों के विकास हेतु आरक्षण भी एक उपाय है परन्तु यह एकमात्र उपाय नहीं है। आरक्षण का लाभ तो केवल कुछ पढ़े लिखे लोगों को ही मिल सकेगा। शेष पिछड़े वर्ग के विकास हेतु भूमि सुधार भूमि वितरण, विशेष शिक्षण आर्थिक स्थिति में सुधार, अस्पृश्यता उन्मूलन आदि अनेक अन्य उपाय करने होंगे। आरक्षण तो दे दिया गया परन्तु समाज का यह वर्ग आरक्षण का समुचित लाभ उठा सके इसके लिए पर्याप्त सामाजिक, शैक्षणिक व्यवस्था नहीं की गयी। परिणामतः लम्बे अरसे के आरक्षण के बावजूद सभी स्तरों पर आरक्षित सीटें रिक्त पड़ी हैं।

मेडिकल इंजिनियरिंग एवं अन्य तकनीकी शिक्षा के प्रति बढ़ते हुए आकर्षण तथा रोजगार के अभाव ने आरक्षण को विवाद का मुद्दा बना दिया है। यदि सभी रोजगार आरक्षित या अनारक्षित कर दिये जायें तो भी सभी जातियों के लाखों प्रतिभावान लोग बेकार ही रह जायेंगे। अतः 'पूर्ण रोजगार' या रोजगार का अधिकार ही विवाद के तीखेपन को कम कर सकता है।

अभाविप सम्पूर्ण छात्र समुदाय का आह्वान करता है कि आरक्षण के विषय पर आपस में संघर्ष करने के बजाय 'पूर्ण रोजगार' के लिए देशव्यापी संघर्ष प्रारम्भ करे तथा कुछ हजार नौकरियो या प्रवेश के लिए कोई ऐसा काम न करे जिससे समाज की एकात्मता और अखण्डता बाधित हो?

क. विभिन्न पाठ्यक्रमों में SC और ST छात्रों के नामांकन की स्थिति

	अनुसूचित जाति		जन जाति	
समूह	स्नातक	स्नातकोत्तर	स्नातक	स्नतकोत्तर
1. कला	10·4%	10·5%	2·0%	1·7%
2. विज्ञान	4·4%	3·4	0.8	0·7
3. वाणिज्य	4·7%	5·2	1·3	1.0
4· इंजिनियरिंग एवं तकनीकी	6·1%	2·9	0·9	0.5
5. मेडिसिन	8·4%	4·3	1·9	0·7
6· कृषि	6·0%	2·8	0.4	0·4
7. विधि	6·8	1·8	1·9	0.2
8। Professional	6·8	3·5	1·6	0.6
9. NonProfessional	7·7	8·1	1·6	1·4

[शिक्षण संस्थाओं में 15%SC तथा 5%ST के लिए आरक्षण है]

ख. गुजरात के मैडीकल तथा इन्जीनियरिंग में स्थिति

	आरक्षण का%	82-83	83-84	84-85
SC	7%			6·4
ST	14%	6·2%	5·8%	3·4%
OBC	10%	4·4%	4·05%	6·16%

यानि 31% आरक्षण के बावजूद मात्र 15·96 ·/. स्थान भरे जा सके हैं।

ग. केन्द्र सरकार की सेवाओं में SC/ST/OBC की स्थिति

	कुल	SC/ST	OBC
प्रथम श्रेणी	174026	9891	8169
		(5·68)	(4·69)
द्वितीय श्रेणी	912925	165982	97063
		(18·18)	(10·63)
तृतीय + चतुर्थ	484687	118282	91975
		(24·40)	(18·98)
सभी श्रेणी मिलकर	1571638	294155	197207
		18·72	12·55

[केन्द्रीय सेवाओं में SC-15% तथा ST-50% का आरक्षण है। OBC हेतु कोई आरक्षण नहीं है]

सार संक्षेप

— वर्ण व्यवस्था प्राचीन काल में उपयोगी रही होगी। परन्तु आज उसे जड़-मूल से नष्ट कर समतायुक्त समाज बनाने की आवश्यकता।

— समाज के पिछड़े वर्गों को शेष समाज के समकक्ष लाने तथा सत्ता, शिक्षा एवं सम्पत्ति में भागीदार बनाने हेतु आरक्षण एक कारगर उपाय है परन्तु यह एक मात्र उपाय नहीं।

— 'अनुसूचित जाति' एवं 'जनजाति' हेतु आरक्षण एक ऐतिहासिक अनिवार्यता।

— SC और ST के अलावा देश का काफी बड़ा जनसमुदाय सामाजिक एवं

शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा है जिसे अन्य पिछड़ा वर्ग (Other Backward Classes कहते हैं। देश के 10 से अधिक राज्यों में OBC के लिये आरक्षण है। परन्तु अब विद्यमान आरक्षण में वृद्धि या नवीन आरक्षण करने के पूर्व देश में आम सहमति उत्पन्न करना आवश्यक है।

— सेवाओं तथा शिक्षा के स्तर को बनाये रखते हुए आरक्षण की व्यवस्था।

— पिछड़ेपन का आधार केवल आर्थिक नहीं तो सामाजिक, शैक्षणिक तथा आर्थिक पिछड़ेपन के संयुक्त आधार पर ही पिछड़ेपन का निर्धारण।

— पिछड़ेपन के निर्धारण में जाति महत्वपूर्ण है परन्तु केवल जाति के आधार पर निर्धारण अनुचित।

— ऐसी सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक संरचना खड़ी करना जिससे पिछड़ा वर्ग आरक्षण का समुचित लाभ उठा सके और आरक्षित स्थान खाली न रहे।

— आरक्षण की अधिकतम मर्यादा तथा खुली स्पर्धा के बीच सुसंगति आवश्यक।

— आरक्षण अनन्तकाल तक चलनेवाली व्यवस्था नहीं।

— आरक्षण के कारण 'पिछड़े' बने रहने की मानसिकता उत्पन्न न हो तथा इसका लाभ निरन्तर स्तर पर स्थित व्यक्ति को भी मिल सके इसकी व्यवस्था।

— समय-समय पर आरक्षण नीति की समीक्षा।

— आरक्षण के संवैधानिक उपबन्ध को सामाजिक मान्यता दिलाने हेतु सरकारी एवं गैर सरकारी स्वयंसेवी प्रयास आवश्यक।

— अन्य वर्गों के प्रतिभावान तथा निर्धन लोगों हेतु प्रभावी व्यवस्था ताकि आरक्षण के कारण कटुता उत्पन्न न हो।

दस्तावेज

सामाजिक आन्दोलन खड़ा करें

२७-२८ व २९ मार्च १९८१ को नागपुर में रा० स्व० संघ की अ० भा० प्रतिनिधि सभा की बैठक में पारित प्रस्ताव :

"राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा आरक्षण के प्रश्न को लेकर गुजरात व अन्य प्रदेशों में जो विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हुई है, उसे देखकर बहुत चिन्तित है। संघ हरिजन और जनजातियों सहित सम्पूर्ण हिन्दू समाज को एक एवं अभिन्न मानता है तथा इसी ऐक्यभाव के जागरण के लिये सतत् प्रयत्नशील रहा है। संघ यह मानता है कि शताब्दियों के सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए इन बन्धुओं को शेष समाज के समकक्ष लाने के लिए आरक्षण व्यवस्था को अभी बनाये रखना आवश्यक है।

अ० भा० प्रतिनिधि सभा का मत है कि गत तीस वर्षों में आरक्षण नीति के गलत क्रियान्वयन के कारण आरक्षण वांछित लक्ष्य-सिद्धि के स्थान पर सत्ता और वोट की राजनीति का एक हथियार मात्र बनकर रह गया है। फलस्वरूप समाज में परस्पर अविश्वास एवं तनाव की स्थिति निर्माण हो रही है। इस सभा का सुविचारित मत है कि विषमता से मुक्त एवं सौहार्दपूर्ण समाज के निर्माण के राष्ट्रीय संकल्प की पूर्ति के लिये केवल संवैधानिक व राजनैतिक प्रयत्नों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है। इसलिए, सभा का सुझाव है कि निःस्पृह विचारकों की एक समिति का निर्माण किया जाय जो आरक्षण से उत्पन्न समस्या व सभी पहलुओं पर गहन चिन्तन कर हरिजन एवं जनजातियों के सामाजिक तथा आर्थिक उन्नयन के लिये ठोस सुझाव प्रस्तुत करे। इस समिति को आर्थिक दृष्टि सेपिछड़े हुए अन्य वर्गों के बन्धुओं के विकास की गति को तीव्र करने की दृष्टि से भी आवश्यक सुविधाएँ सुझाना चाहिए।

प्रतिनिधि सभा प्रधानमन्त्री के इस दृष्टिकोण से सहमत है कि आरक्षण स्थायी व्यवस्था नहीं हो सकती। अतः इन वैशाखियों का आधार यथाशीघ्र समाप्त होना चाहिए तथा इस व्यवस्था के कारण योग्यता एवं कार्यक्षमता की हानि नहीं होनी चाहिए। सभा सभी दलों व नेताओं से अनुरोध करती है कि वे भी इस दृष्टिकोण का समर्थन करें और इस समस्या का हल खोजने की दिशा में कदम उठाएँ।

प्रतिनिधि सभा का विश्वास है कि सामाजिक संस्थाओं एवं सरकारी तन्त्र के सम्मिलित प्रयासों से ही इस दिशा में वांछित परिणाम निकल सकते हैं। इसलिए सभा सभी नागरिकों से, विशेषकर संघ के स्वयंसेवकों से अनुरोध करती है कि वे समाज में सौमनस्य एवं आत्मीयता का ऐसा वातावरण बनाने का प्रयास करें जिससे समाज अपनी समस्याओं का बिना कटुता एवं विद्वेष के निराकरण कर सके और यदि कभी तनाव निर्माण हो भी तो उसके शमन के लिए त्वरित उपाय कर सके।"

□ "हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता का यह कलंक कदापि, कदापि नहीं होना चाहिए ..... हिन्दुओं ने अस्पृश्यता से चिमड़-चिमड़कर एक और पाप कर्म किया है और इसे धोने के लिये उन्हें समुचित तप करना ही चाहिए। अस्पृश्यता का पाप मैंने किया है और मुझे शुद्ध होना है। अतः अस्पृश्यता निवारण का यह जो कार्य हम कर रहे हैं उसका एक मात्र उद्देश्य हमारे अपने जीवन का शुद्धिकरण है, न कि अछूत के जीवन का।

यदि सवर्ण जन अपने आपको हरिजनों पर कृपा करने वाले संरक्षक समझते हैं तो यह हमारी भूल होगी। आप हरिजनों के लिये सवर्ण हिन्दू जो कुछ भी करते हैं, वह पीढ़ी दर पीढ़ी उनके प्रति किये गये अपराधों के अश्रुपूर्ण प्रायश्चित के अलावा कुछ भी नहीं होगा....."

—महात्मा गाँधी

□ क्या तुम समझते हो, हमारा धर्म 'धर्म' कहलाने लायक है? हमारा धर्म तो केवल 'छुओ मत!' में है—"मुझे मत छुओ", "मुझे मत छुओ!" हा भगवान! जिस देश के बड़े-बड़े नेता गत दो हजार वर्षों से केवल यही विवाद करते आये हैं कि भोजन दाहिने हाथ से किया जाय या बायें हाथ से..... यदि ऐसे देश का विनाश न हो तो किसका हो? जिस देश में लाखों लोग महुए के फूल से पेट भरते हैं, जहाँ दस-बीस लाख साधु और दस एक करोड़ ब्राह्मण इन गरीबों का रस चूसते हैं, पर उनके सुधार का रत्ती भर प्रयास नहीं करते, वह कोई देश है या नरक? वह धर्म है या शैतान का नग्न नृत्य?

—स्वामी विवेकानन्द